चन्दामामा
सितंबर १९९७

CHANDAMAMA

चन्दामामा

सितंबर १९९७

एक प्रति : ६.००
वार्षिक चंदा : ७२.००

विश्वास में दृढ़ता !

गोल्ड कवरिंग ज्वल्स

निजी सजावट केलिये बनाये गये बहुत बढ़िया कारीगरी व बनावट (डिज़ाइन) -- दोनों में एकदम बेजोड । मेरी पिछले ३५ वर्षों में गोल्ड कवरिंग गहनों के निर्माण में लगी मशहूर संस्था है । नीचे दिये गये कुछ नमूने के गहने, वी.पी.पी. द्वारा खरीदे जा सकते हैं । गहनों के कोड नंबर लिखें और अपनी आवश्यकतानुसार उन्हें मंगा लें । वी.पी.पी. का शुल्क नहीं । १५० पृष्ठोंवाली रंगीन कैटलॉग भी । आप मुफ्त मंगा सकते हैं ।

A709 Rs. 175/-
A425 Rs. 100/-
A710 Rs. 175/-
C2836 Rs. 63/-
B1460 Rs. 245/-
C2305 Rs. 42/-
C2303 Rs.54
A207 Rs. 100/-
B1429 Rs. 230/-
B1472 Rs. 125/-
A20 Rs.50
B1517 Rs. 56/-
A144 Rs. 50/-
C2107 Rs.73
A82 Rs. 50/-
A360 Rs.100
B1546 Rs.63
A156 Rs. 50/-
B1393 Rs.160
A251 Rs.100
B1340 Rs. 71
A21 Rs.50
B1963 Rs.78
A990 Rs.493 1/2 Gram
A412 Rs. 100/-
C2029 Rs. 85/-
A129 Rs. 50/-
B1350 Rs. 48/-
A49 Rs. 50/-
B1336 Rs. 87/-
B1387 Rs. 160/-
A134 Rs. 50/-
C2810 Rs.50
A314 Rs. 100/-
B1316 Rs. 260/-
B1326 Rs. 115/-
C2166 Rs. 63/-
C2112 Rs.85

MERI GOLD COVERING WORKS
Post Box : 1405, 18, Ranganathan Street, T. Nagar,
Chennai 600 017. Phone : 4344671, 4342513

MGC/31/97

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी' संचालक : बी. नागिरेड्डी

एकता का अभाव - एक शाप

ब्रिटिश की ईस्ट इंडिया कंपनी व्यापार करने भारत में आयी। ये कोई प्रथम व्यापारी नहीं थे, जो हमारे देश में पहले-पहल व्यापार करने आये। पुर्तगाली, डच व फ्रान्स के व्यापारी भी इनके पहले हमारे देश में आ चुके। किन्तु ब्रिटिश अत्यधिक महत्वांकाक्षी थे। वे चाहते थे कि पूरे देश को अपने अधीन कर लें और इसे अपनी जमींदारी बना लें। १७६५ में उन्होंने एक क्षेत्र पर अधिकार चलानेवाले नवाब से समझौता कर लिया। इस प्रकार कंपनी ने बंगाल, बिहार और ओरिस्सा पर अपना सिक्का जमाया। एक प्रकार से उन्होंने वहाँ अपना राज स्थापित किया, सरकार चलाने लगी। यह 'जान कंपनी राज' के नाम से लोकप्रिय हुआ।

भारत के भू-भागों पर आधिपत्य जमाने के लिए उन्होंने छल व कपट के मार्ग अपनाये। ईमानदारी से दूर रहे। उन्होंने देश की परंपराओं तथा भावनाओं की परवाह ही नहीं की। भारत के राजाओं से जब चाहा दोस्ती की और जब चाहा उन्हें धोखा दिया। अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए उन्होंने उनका उपयोग मात्र किया।

क्या इस स्थिति का कारक केवल जान कंपनी ही है? क्या उसी को दोषी ठहरायें? अगर देश के राजा संगठित रहते तो अंग्रेज़ कभी सफल न होते। राजा हमेशा आपस में झगड़ते थे। उनकी दृष्टि देश-कल्याण पर नहीं थी बल्कि वैयक्तिक व्यर्थ समस्याओं पर थी। पर हाँ, इन राजाओं में से कुछ राजा देश-प्रेमी थे। बाक़ी राजा तो पड़ोसी राज्यों को, जान कंपनी की सहायता पाकर ही सही, बरबाद करने पर तुले हुए थे।

अब रही भारत की सामान्य जनता की बात। क्या उन्होंने मौन रहकर ब्रिटिश के अन्याय को चुपचाप सह लिया? क्या उस सत्ता के विरुद्ध उन्होंने विद्रोह नहीं किया ?

वर्ष : ४७ सितंबर १९९७ अंक : ११

एक प्रति : रु. ६/- वार्षिक चन्दा : रु ७२/-
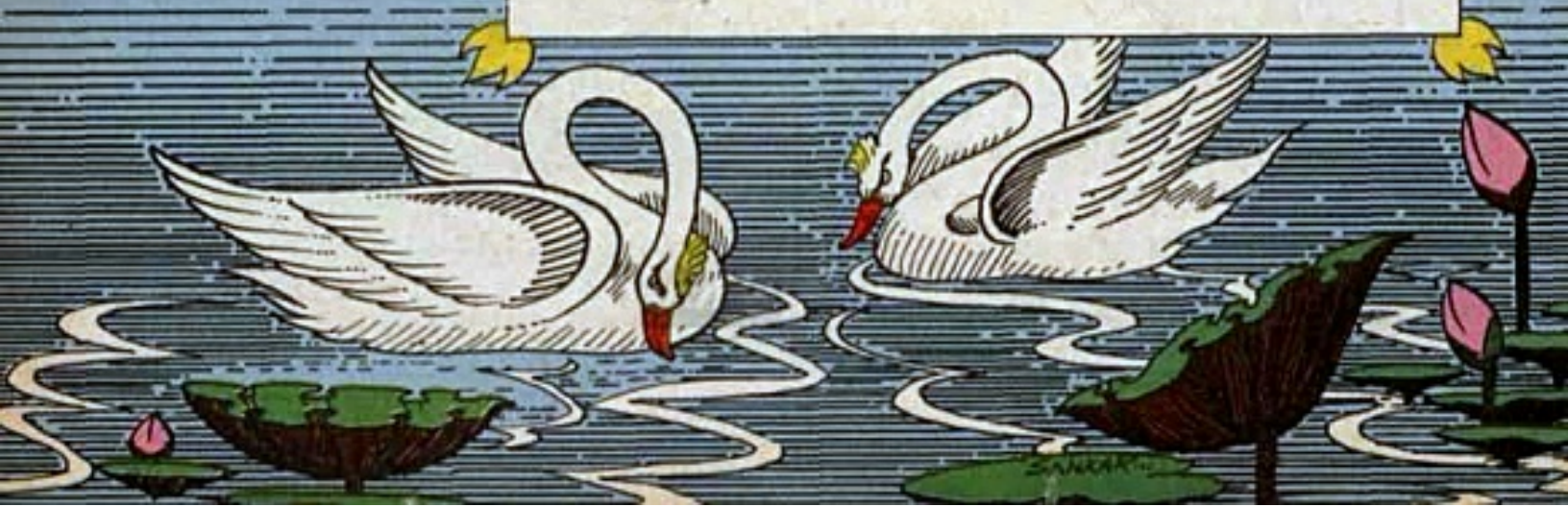
PolioPlus

IMMUNIZATION AN ASSURANCE OF GOOD HEALTH TO CHILDREN

VACCINATIONS When and How Many

Age to Start Vaccination	Name of Vaccine	Name of Disease	How Many Times
Birth	BCG	Tuberculosis	Once
6 weeks	Polio	Polio	Three times with intervals of at least one month.
6 weeks	DPT	Diphtheria Pertussis (Whooping Cough) Tetanus	Three times with intervals of at least one month
9 months	Measles	Measles	Once

Babies should receive all vaccinations by the time they are twelve months old.

Pregnant women should get themselves vaccinated against Tetanus (TT) twice—in an interval of at least one month—during the later stages of pregnancy.

HEALTHY CHILD—NATION'S HOPE & PRIDE

Design courtesy : World Health Organisation

समाचार - विशेषताएँ

हमारे नये राष्ट्रपति

ऐसे बहुत ही कम व्यक्ति होते हैं, जो दरिद्र परिवार में जन्म लेकर भी अपनी अकुंठित दीक्षा, धुन, निरंतर परिश्रम के फलस्वरूप अति उन्नत ओहदे पर पहुँच पाते हैं। ऐसे व्यक्तियों में अमेरीका के पूर्व अध्यक्ष अब्रहाम लिंकन एक हैं। जुलाई १२ को संपन्न चुनाव में हमारे देश के ग्यारहवें राष्ट्रपति अत्यधिक मत पाकर निर्वाचित हुए महान हस्ती हैं श्री के.आर. नारायणन। इनका जन्म एक कुग्राम में हुआ। ये गरीब परिवार में जन्मे। काफ़ी तकलीफ़ें उठाकर इन्होंने शिक्षा पायी। एक-एक सीढ़ी को पार करते हुए इन्होंने यह सर्वोच्च पद पाया।

कोचरिल रामन नारायणन केरल राज्य के कोट्टयम के समीप के उलवूर नामक गाँव में १९२०, नवंबर, २७ को जन्मे। श्री नारायणन के पिता आयुर्वेद वैद्य थे। सात साल की उम्र में श्री नारायणन सरकारी प्राथमिक पाठशाला में भर्ती किये गये। जब वे उन्नत पाठशालाओं में विद्यार्थी थे, तब शुल्क चुका न सकने के कारण उन्हें कई तकलीफ़ों का सामना करना पड़ा। फिर भी इन्होंने ध्यान व श्रद्धापूर्वक पढ़ाई समाप्त की और अच्छे अंक पाकर उत्तीर्ण हुए।

तिरुवनंतपुर के विश्वविद्यालय कालेज में वे भर्ती हुए। १९४२ में अंग्रेजी साहित्य में प्रथम श्रेणी में प्रथम आये। कुछ समय तक इन्होंने एक ट्युटोरियल कालेज में अध्यापक का काम संभाला। बाद दिल्ली गये। इंडियन ओवरसीस विभाग में नौकरी पायी। फिर उन्होंने वह नौकरी भी छोड़ दी और उससे भी कम वेतन में एक अखबार में काम किया। कुछ समय तक मद्रास से निकलनेवाले 'हिन्दू' व बंबई से प्रकाशित होनेवाले 'टाइम्स आफ इंडिया' अखबारों में उपसंपादक का कार्य-भार संभाला। 'कौटिल्य' के नाम से वे लेख लिखा करते थे। १९४४, अप्रैल १० को उन्होंने महात्मा गाँधी का साक्षात्कार किया। उस दिन गाँधीजी ने मौन-व्रत धारण किया था, इसलिए श्री नारायणन ने जो-जो प्रश्न पूछे, उनका उत्तर उन्होंने डाक के लिफ़ाफ़ों पर लिखकर दिया। श्री नारायणन के पास वे लिफ़ाफ़े अब भी सुरक्षित हैं।

१९४५ में वे इंग्लैण्ड गये। लंडन स्कूल आफ़ एकनामिक्स में भर्ती हुए। प्रोफेसर हेराल्ड जे लास्की के प्रीति-पात्र बने। १९४८ में भारत लौट आये। जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें विदेश विभाग में नौकरी दी। बर्मा (मियानमार) की राजधानी रंगून के भारतीय दौत्य कार्यालय में काम करने वे रंगून भेजे गये। तदनंतर इन्होंने जापान, ब्रिटेन, वियतनाम देशों के दौत्य कार्यालयों में काम किया। इसके बाद थायलांड, टर्की, चीन देशों के दौत्य कार्यालयों में काम किया। बाद थायलांड, टर्की, चीन देशों में ये भारत के राजदूत रहे।

१९७८ में सरकारी पद छोड़ दिया और जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के उपकुलपति बने। १९८० में प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने इन्हें भारत का राजदूत बनाकर अमेरीका भेजा।

प्रधानमंत्री बनने के बाद राजीव गांधी ने उन्हें राजनीति के क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए प्रोत्साहन दिया। केरल राज्य से वे संसद के लिए निर्वाचित हुए। वे कांग्रेस पार्टी के उम्मीदवार थे। योजना व विदेश शाखाओं के उपमंत्री के पद पर अपनी जिम्मेदारियाँ संभालीं। बाद विज्ञान व तकनीकी शाखाओं का कार्य-भार भी इन्होंने संभाला। ओट्टपालं से ही वे दूसरी बार भी संसद के लिए चुने गये। इसके बाद ये भारत के उपराष्ट्रपति पद के लिए चुन गये।

यद्यपि वे अब देश के अत्युत्तम पद पर आसीन हैं, फिर भी वे अपना बाल्य-काल नहीं भूले। ''जनता ने मेरे प्रति जो आदर-भाव दिखाया, उसे सविनय स्वीकार कर रहा हूँ। उनकी अभिलाषाओं और उनकी आकांक्षाओं को पूर्ण करने के लिए यथाशक्ति मैं प्रयत्न करूँगा'' श्री नारायणन ने कहा।

प्रत्याशित - अप्रत्याशित

सब की यही राय है कि चंद्रपुरी का राजा चंद्रसेन महा जिद्दी राजा है । वह जो चाहता है, वही करता है; दूसरों की सलाहें लेता ही नहीं । आस्थान में मंत्री का होना आवश्यक है, इसलिए वृद्ध मंत्री को ही इस पद पर रहने दिया । किन्तु उस मंत्री से कभी भी कोई भी सलाह नहीं माँगी । किसी भी विषय पर उससे सलाह लेने की आवश्यकता उसने महसूस नहीं की ।

गुप्तचरों के द्वारा चन्द्रसेन को मालूम हुआ कि राज्य की अधिकाधिक जनता सुखी व संतृप्त नहीं है । इसके बारे में मंत्री या किसी और से बात ही नहीं की । स्वयं जानना चाहता था कि प्रजा क्यों असंतृप्त है । बहुरूपिये के वेष में एक दिन रात को वह नगर में घूमने निकला ।

जब वह एक तंग गली से गुज़र रहा था तब एक घर से पति-पत्नी की बातें सुनायी पड़ीं । खिड़की के पीछे खड़े होकर उनकी बातें ग़ौर से सुनने लगा ।

"तीन महीनों से देख रही हूँ । आप सदा चिंताग्रस्त दिखायी दे रहे हैं । क्या मैं जान सकती हूँ, इसका क्या कारण है?" पत्नी अपने पति से पूछ रही थी ।

"क्या कहूँ? सोचता तो बहुत हूँ, लेकिन कुछ भी हो नहीं रहा है ।" पति ने निराशा-भरे स्वर में कहा ।

राजा को लगा कि जनता की असंतृप्ति का कारण उसे मालूम हो गया । जो वह सोच रही है, वह हो नहीं रहा है ।

चंद्रसेन अंत:पुर लौटा और पूरी रात इसी विषय पर सोचता रहा । बहुत सोच-विचार के बाद उसने निर्णय लिया कि दूसरे दिन कुछ लोगों से पूछूँगा और जानूँगा कि वे क्या चाहते हैं । उनकी इच्छा पूरी करूँगा और उन्हें संतृप्त करूँगा ।

आशालता

दूसरे दिन स्नान करने के बाद जब चंद्रसेन बाहर आया तब एक सेवक दूध का लोटा लिये खड़ा था। राजा को देखते ही उसने दूध का लोटा उसे दिया। शायद उसने देखा नहीं होगा, दूध फटा हुआ है। राजा के हाथ में लोटा देते हुए उसने यह बात जान ली। सेवक भय से काँपने लगा।

चंद्रसेन ने उसे घूरते हुए देखा और पूछा "सच बताओ कि अब मन ही मन क्या सोच रहे हो? तुम्हें सच बताना ही होगा।"

"सोच रहा हूँ कि महाराज गरम दूध मेरे मुँह पर उँडेल देंगे।" सेवक ने डरते हुए कहा।

चंद्रसेन ने वही किया, जो सेवक सोच रहा था। रोता हुआ वह वहाँ से चला गया। उस दिन आस्थान में एक मामूली चोर लाया गया। उसका जुर्म साबित हुआ। चंद्रसेन चाहता था कि उस चोर को सज़ा न दूँ और उसे खुश करूँ। उसने चोर से पूछा "बताओ कि अब मैं क्या करने जा रहा हूँ। सच बोलो।"

"महाराज, मुझे भय है कि आप कोड़े से पिटवायेंगे" चोर ने कहा। चंद्रसेन ने आज्ञा दी कि चोर को कोड़े से पीटा जाए।

उस दिन रात को महारानी ने अपने पति चंद्रसेन को पान खिलाते हुए कहा "मायके जाकर माता-पिता को देखने की मेरी बड़ी इच्छा है। अनुमति देंगे न?"

पान खाते हुए चंद्रसेन ने हँसते हुए पूछा "मुझसे किस प्रकार के उत्तर की

प्रतीक्षा कर रही हो?"

"अभी-अभी तो तुम्हारे सगे-संबंधी तुम्हें देखने आये थे, तुम जाओ मत" यही आप कहनेवाले हैं, ऐसा मेरा विचार है।" रानी ने अपने मन की बात कही।

"हाँ, वही कहने जा रहा हूँ" चंद्रसेन ने कहा। दीर्घ श्वास लेती हुई रानी अपने शयनागार में चली गयी।

अब तक जो-जो घटनाएँ घटीं, सबका मनन किया राजा ने। जो-जो वे मन में सोच रहे थे, अब तक उन्हें पूरा करता रहा। उन्हें आनंद पहुँचाने के उद्देश्य से ही उसने ऐसा किया। किन्तु लगता है, कोई भी खुश नहीं है। उसे लगा कि प्रजा की चिंता का शायद दूसरा कोई कारण होगा। चंद्रसेन उस रात को बहुरूपिया बनकर फिर

हो जाए, जिसकी कल्पना भी उन्होंने नहीं की तो जनता की चिंता दूर हो जायेगी। उसने निर्णय लिया कि कल से उन-उनकी इच्छा जानूँगा और उनकी इच्छा के विरुद्ध कार्रवाई करूँगा, जिससे उन्हें आनंद होगा।

दूसरे दिन आस्थान जाने के पहले राजा ने सेवक के दिये कपड़ों को पहन लिया। पहनाने के बाद ही सेवक ने देखा कि कंधे के पास कुरता थोड़ा-सा फटा हुआ है। डरता हुआ बोला "क्षमा कीजिये, महाराज। दूसरा कुरता ले आता हूँ।"

"बोलो, अब मैं क्या करनेवाला हूँ ?" चंद्रसेन ने सेवक से पूछा। "मुझे सज़ा देंगे। इस फटे कुरते को पहनकर आप राजसभा में नहीं जाएँगे।" सेवक ने कहा।

"मैं तुम्हें दंड नहीं दूँगा। इसी कुरते को पहनकर सभा में जाऊँगा।" कहता हुआ चंद्रसेन निकल पड़ा। सभा का कार्यक्रम यथावत् चल रहा था। वृद्ध मंत्री ऊँघ रहा था। चंद्रसेन ने देखा तो बग़ल में बैठे सभासद को इशारा किया और तद्द्वारा मंत्री को जगाने के काम में सफल हुआ।

संभलकर मंत्री बैठ गया और कहा "क्षमा कीजिये महाराज।"

"महामंत्री, कहिये कि अब मैं क्या कहनेवाला हूँ?" चंद्रसेन ने पूछा। मंत्री ने कल्पना भी नहीं की थी कि उससे ऐसा प्रश्न पूछा जायेगा। उसने धीरे-धीरे कहा "आप शायद कहेंगे कि तुम जैसे एक निद्रालू मंत्री को देखकर अपने आप पर

से नगर में गया।

उसने देखा कि एक भवन के बाहर पति-पत्नी कुर्सियों में बैठे आपस में बातें कर रहे हैं। पेड़ के पीछे छिपकर उसने उनकी बातें सुनीं।

"इधर कुछ दिनों से आप खुश नज़र नहीं आ रहे हैं। पहले की तरह आप हँसी-मज़ाक नहीं कर रहे हैं। आप मौन व चिंतित रह रहे हैं, मानों कुछ खो दिया हो। कारण क्या है ?" पत्नी ने पूछा।

पति ने कहा "इधर कुछ दिनों से ज़िन्दगी कोल्हू के बैल की तरह चल रही है। आनंद तो तभी होगा, जब कोई अप्रत्याशित घटना घटे, अनहोनी होनी हो।" पति ने कहा।

चंद्रसेन को लगा कि अकस्मात कुछ

तरस आ रही है, शर्मिंदा हूँ ।''

मंत्री के विचारों के विरुद्ध बोलने के उद्देश्य से चंद्रसेन ने कहा ''ऐसी कोई बात नहीं । आप जैसे योग्य मंत्री पर मुझे गर्व है ।''

सब हँस पड़े । यह सोचकर कि राजा ने जान-बूझकर ही यह व्यंग्य-बाण कसा है, मंत्री मन ही मन कुढ़ता रहा, अपमान की पीड़ा से तड़पता रहा ।

उस दिन शाम को राजा चंद्रसेन उद्यानवन में टहल रहा था । हवा में उड़कर कांटों से भरी छोटी-सी एक डाली राजा के पैरों आ लगी । बूढ़ा माली दौड़ा-दौड़ा आया और डाली को दूर फेंकने के बाद कहा ''क्षमा कीजिये महाराज । भविष्य में ऐसी ग़लती फिर कभी नहीं होगी । आगे मैं बहुत ही सावधान रहूँगा ।''

''बताओ कि जो हुआ, उसपर मैं क्या निर्णय लेनेवाला हूँ ।'' राजा ने माली से पूछा ।

एक-दो क्षण रुककर माली बोला ''आप कहेंगे कि गुलाबों के इस बग़ीचे में कांटों का होना स्वाभाविक है । बूढ़ा हूँ, इसलिए मुझे अशक्त मानकर नौकरी से हटा देंगे । प्रार्थना है कि ऐसा मत करें ।''

''नहीं, मैं वही काम करनेवाला हूँ । तुम्हें हटाकर किसी युवक को माली की नौकरी दिलानेवाला हूँ ।'' कहता हुआ रोते हुए बूढ़े की ओर देखे बिना राजा राजभवन की ओर चला गया ।

उस दिन रात को रानी ने फिर से मायके जाने की बात का ज़िक्र किया । उसने राजा से कहा ''कल मैंने सपने में देखा कि मेरी माँ का स्वास्थ्य ठीक नहीं है । एक बार उन्हें देख आने की अनुमति दीजिये ।''

''मुझसे किस प्रकार के उत्तर की प्रतीक्षा कर रही हो ।'' चंद्रसेन ने पूछा ।

रानी ने हँसकर कहा ''बार-बार पूछ रही हूँ, इसलिए मुझे जाने की अनुमति देंगे ।''

''नहीं, तुम्हारा विचार ग़लत है । मैं तुम्हें मायका जाने की अनुमति देनेवाला नहीं हूँ ।'' राजा ने कहा ।

रानी सिर झुकाये अपने कक्ष में चली गयी । उसके चिंताग्रस्त वदन को देखकर

राजा सोच में पड़ गया । उसे लगा कि अप्रत्याशित घटी घटनाओं से भी कोई तृप्त नहीं दीख रहा है । फिर क्या करने पर जनता सुखी व संतृप्त रह सकेगी ? बहुत सोचने के बाद भी उसे इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिला । रात भर वह इसी सोच में जागा रहा ।

आधी रात गुज़र गयी, फिर भी राजा बिना सोये कक्ष में ही इधर-उधर टहल रहा था । रानी ने पूछा ''क्या नींद नहीं आती? ऐसी क्या गंभीर बात है, जिसपर आप इतने व्याकुल दीख रहे है ।''

पहली-पहली बार उसने अपने विचारों के बारे में पत्नी को खुलासा बताया । जो हुआ, सब कुछ बताने के बाद उसने कहा ''जिनकी चाह फलीभूत हुई, वे भी तृप्त नहीं हैं । वे भी तृप्त नहीं हैं, जिन्हें अप्रत्याशित रूप से सफलता मिली । मेरी समझ में नहीं आता कि क्या करने पर मेरी प्रजा की चिंताएँ दूर होंगीं ।''

रानी हँस पड़ी और कहा ''हो सकता है, होनी और अनहोनी के बारे में जो सोचते हैं, वे हमारी आवश्यकताओं से संबंधित न हों; शायद वे आनंद पहुँचानेवाले न हों । राजा प्रजा की दृष्टि में पिता समान है । रोटी कपड़ा, मकान- ये तीनों मनुष्य की बुनियादी ज़रूरतें हैं । इन ज़रूरतों की पूर्ति जो राजा करता है, वही प्रजा का सच्चा प्रतिनिधि है । परंतु इसका यह मतलब नहीं कि प्रजा को सुखी देखने के लिए राजा उन्हें आराम से बिठाकर खिलाये-पिलाये । उन्हें भी परिश्रम करना होगा और उस परिश्रम से प्राप्त आनंद सच्चा आनंद कहलाता है । जिस दिन आप यह काम कर सकेंगे, उस दिन आपकी जनता में से कोई भी चिंताग्रस्त नहीं होगा ।''

अब चंद्रसेन को मालूम हुआ कि शासन-पद्धति में उससे क्या-क्या गलतियां हुई । दूसरे दिन सबेरे ही उसने मंत्री और प्रधान कर्मचारियों से चर्चाएँ कीं । प्रजा के कल्याण के लिए आवश्यक परियोजनाएँ तैयार करवायीं ।

उस दिन से किसी भी गुप्तचर से यह समाचार नहीं मिला कि प्रजा दुखी है या वे आवश्यकताओं से पीडित हैं ।

महाराज, महाराज ही हैं

स्नान करते-करते प्रवाल देश के राजा का पाँव फिसल गया और गिर गया। पाँव में मोच आ गयी। पैर हिला-डुला न सका। आस्थान के वैद्यों ने पत्तों को निचोड़कर रस-लेपन डाला और पट्टी बाँध दी। कम से कम पंद्रह दिनों तक विश्राम लेने को कहा। उन्होंने राजा को यह कहकर सावधान किया कि अपनी जगह से बिल्कुल हिलना नहीं चाहिये।

महाराज ने मंत्री को बुलाया और शासन-कार्य उसके सुपुर्द किया। मुख्य निर्णय लेने का अधिकार भी उसे दिया।

एक सप्ताह तक मंत्री ने महाराज का प्रतिनिधि बनकर कार्य-भार संभाला। महाराज व मंत्री के शासन-काल की परिस्थितियों में कोई फ़रक़ नहीं आया। मंत्री स्वभाव से ही थोड़ा-बहुत अहंकारी था। अपनी तुलना राजा से करने लगा और उसे लगा कि किसी भी बात में महाराज से कम नहीं हूँ। वे जितने शासन दक्ष हैं, मैं भी उतना ही शासन दक्ष हूँ। उसका अहंकार बढ़ता गया।

"मैं इतनी दक्षता से शासन-भार संभाल रहा हूँ। अब तक मैं ही राजा को सलाहें देता रहता था। मेरी सलाहों के आधार पर ही वे राज्य-भार को सुचारू रूप से संभालते रहे। राजा तो केवल उत्सव-मूर्ति हैं। बिना राजा के भी शासन-भार बिना उतार-चढ़ाव के संभाला जा सकता है और मैंने यह प्रमाणित किया।" मंत्री ने यों सोचा और तानाशाह की तरह बरताव करने लगा।

एक दिन मेहनत-मज़दूरी करके जिन्दगी गुज़ारनेवाले ग़रीबों की कम से कम साठ झोपड़ियाँ जलकर राख हो गयीं। दो सौ से ज्यादा लोग निराश्रयी हो गयी। समाचार पाते ही मंत्री उस जगह पर पहुँचा। उसने घोषणा की कि सभी की झोंपड़ियाँ फिर से बनवायी जाएँगी।

हफ़्ते भर के लिए पर्याप्त चावल भी उन्हें

शील पटनाकर

मुफ़्त दिलवाया।

इतना सब कुछ करने के बाद भी मज़दूर खुश दिखायी नहीं पड़े। मंत्री ने उनसे पूछा "कहिये, आपको और किस-किस तरह की सहायता चाहिये ?"

"एक बार महाराज को देखने की अनुमति दीजिये। इस विषम स्थिति में वे हमें ढ़ाढ़स बँधाएँगे तो अपने को धन्य मानेंगे। हमारे कष्टों में वे हमारे साथ थे, हर हालत में उन्होंने हमारी मदद की। महाराज को देखने की हमारी बड़ी तमन्ना है।" मज़दूरों ने कहा।

मज़दूरों की बातें सुनकर मंत्री आश्चर्य में डूब गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या किया जाए। तब महाराज खुद सजी बग्घी में वहाँ आया। उसे देखते ही दीन-दुखियों के चेहरे खिल उठे। सबने हाथ जोड़कर महाराज को प्रणाम किया। महाराज ने सबको एक बार गौर से देखा और कहा "अभी-अभी मैंने सुना कि आप सबों की झोंपड़ियाँ जलकर राख हो गयीं।"

सब राजा की घोड़ा-गाड़ी के चारों ओर घिर गये। अपनी-अपनी तक़लीफ़ें बतायीं और साथ ही राजा की तबीयत का हाल पूछा।

महाराज ने सबको ढ़ाढ़स बंधाया और यह आश्वासन देकर चला गया कि शीघ्र ही उनकी झोंपड़ियाँ पुनःनिर्मित होंगीं।

मंत्री की आँखों के सामने ही यह सब कुछ हुआ। वह घर लौटा और गहरी सोच में पड़ गया। बहुत-कुछ सोचने के बाद एक बात उसकी समझ में आयी। जनता चाहती है कि उनका राजा स्वस्थ रहे और उनके शासन-काल में वे भी सुखी-संतुष्ट रहें। उनकी दृष्टि में मंत्री, सेनाधिपति तथा अन्य उच्च अधिकारी राजा की आज्ञा का पालन करनेवाले सेवक मात्र हैं। उन्हें भय है कि उनसे कोई ग़लती हो जाए तो राजा उन्हें सज़ा देंगे। साथ ही उन्हें इस बात पर विश्वास भी है कि कष्ट आने पर वे ही सहारा देंगे और उन्हें कष्टों से उबारेंगे। यही विश्वास उन सबको समैक्य रखता है, जिसके कारण राज्य प्रशांत रह पाता है।

इस वास्तविकता को जानने के बाद मंत्री का अहंकार टूट गया। वह महाराज के महत्व व गरिमा को जान गया। तब से द्विगुणीकृत उत्साह व तत्परता से महाराज की सेवा में जी-जान से लग गया। शासन-कार्य को सुचारू रूप से संभालने में महाराज का प्रमुख सलाहकार बन गया।

(पिताश्री बिंदुसार की आज्ञा के अनुसार अशोक अवंती की राजधानी उज्ञयिनी जाने निकल पड़ा। उस दिन सायंकाल मार्ग-मध्य के विदिशा की घाटियों में ठहर गया। प्रातःकाल जब प्रकृति के सौंदर्य को निहारता हुआ जाने लगा तब अगाध में गिरने ही वाला था तो शाक्यनायक की पुत्री विदीशा ने उसकी रक्षा की। उस दिन रात को दो युवतियाँ भी पकड़ी गयीं, जो अशोक की हत्या में विफल हुई) -बाद

अपराधिनी युवतियों के सामने ही यश उनके साथ आये पुरुषों को तरह-तरह से सताने लगा, उन्हें मारने-पीटने लगा। बाद उसने उन स्त्रीयों से कहा "तुम दोनों युवराज को मारने आयीं। इस अपराध के लिए तुम्हें मृत्यु-दंड मिलेगा। तुम मृत्यु से बच नहीं सकतीं। मरने के पहले ही सही, सच बताओ। कम से कम नरक में तुम्हें कम यातनाएँ सहनी पड़ेंगी।"

नर्तकियाँ घबराती हुई एक-दूसरे को देखने लगीं। उनमें से एक नर्तकी ने कहा "महोदय, हम पर दया कीजिये। हम नरक से नहीं डरती क्योंकि हमने उसे कभी देखा नहीं। किन्तु आपकी ये प्रताड़नाएँ सही नहीं जा रही हैं। हम मौत से डरती हैं। हम पर हिंसा करके हमें मार डालेंगे तो इससे आपको कुछ उपलब्ध होनेवाला नहीं है। हमें जीवित रखेंगे तो हो सकता है, भविष्य में हम आपके
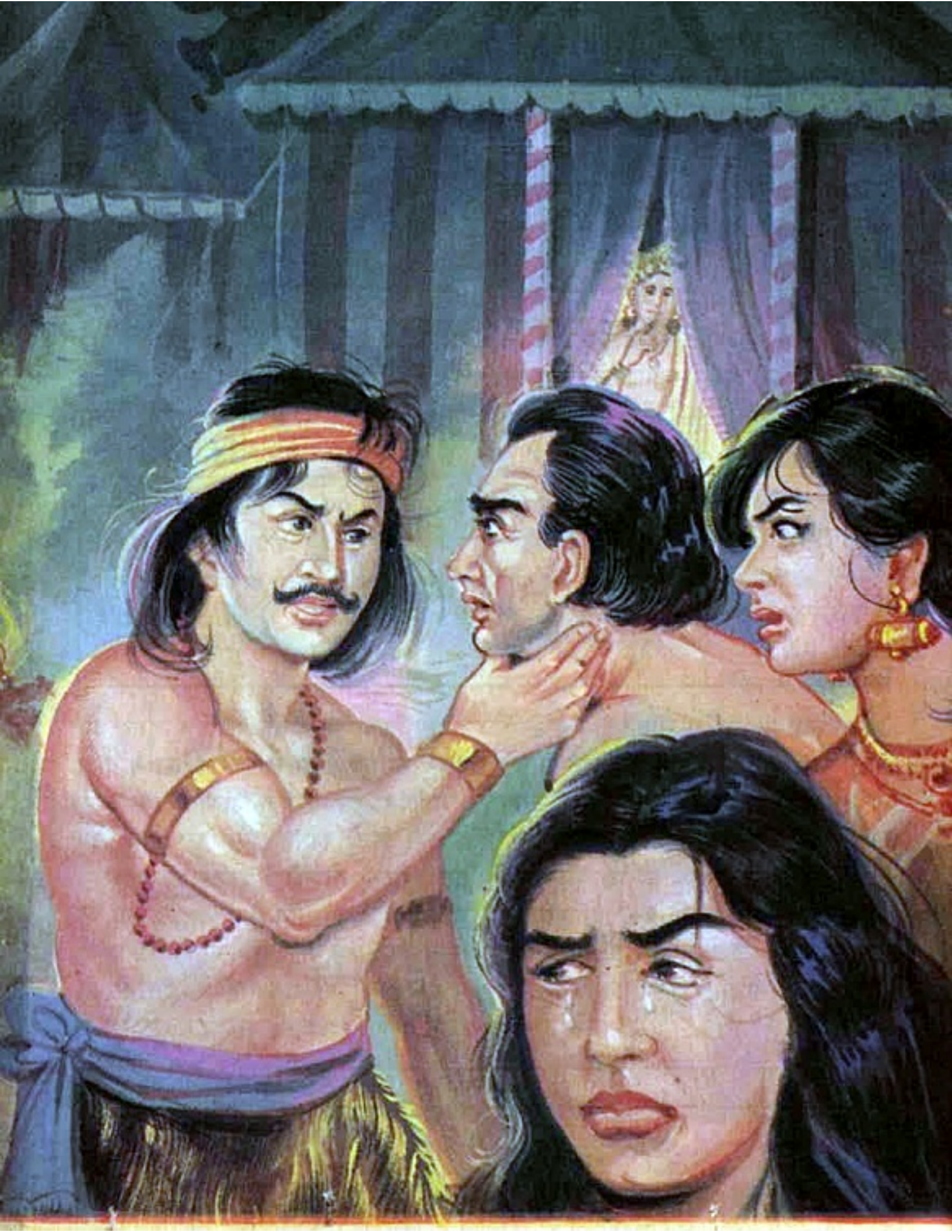
काम आयें। सच क्या है, अब हम बता देंगीं।''

''पहले बताओ कि सच क्या है ? फिर तुम्हारी मौत और ज़िन्दगी के बारे में युवराज निर्णय सुनाएँगे।'' यश ने कहा।

''राजधानी पाटलीपुत्र से ही हम युवराज का पीछा करती आयीं। हम नर्तकियाँ हैं। जो धन देते हैं, उनके कहे अनुसार करना हमारा पेशा है। जिन्होंने हमें युवराज का अंत कर देने के लिए भेजा, वे अवश्य ही उनके शत्रु हैं, किन्तु हम युवराज के शत्रु नहीं हैं।'' एक नर्तकी ने दीन स्वर में कहा ?''

''धन देकर युवराज के किन शत्रुओं ने तुम्हें भेजा ?'' यश ने कठोर स्वर में पूछा।

''पहले वचन दीजिये कि हमें प्राण-भिक्षा मिलेगी।'' नर्तकी ने विनती की।

''शर्तें नहीं, पहले सच बताओ, नहीं तो मार डालूँगा।'' कर्कश स्वर में यश ने पूछा।

''महाशय, युवराज की हत्या करने के लिए हमें भेजनेवाले कोई और नहीं हैं। बिन्दुसार के ज्येष्ठ पुत्र और होनेवाले राजा सुशेम ही हैं।'' नर्तकी ने कहा।

यह सुनते ही अशोक पड़ाव से बाहर आया। उसने पूछा कि क्या यह सच है?

''सौ फ़ी सदी सच है युवराज'' कहकर नर्तकी ने सुस्पष्ट बताया कि वे राजमंदिर में कैसे और कब बुलायी गयीं। उसने यह भी बताया कि हर एक को हज़ार अशर्फ़ियाँ और एक हीरे की अंगूठी भी दी गयी। उसने कहा कि उन्हें आश्वासन दिया गया है कि कार्य सफल हो, विजय प्राप्त करें तो उन्हें और धन

दिया जायेगा। उन्होंने जो अंगूठियाँ पहन रखी थीं और जिन उच्च राजकर्मचारियों के नाम उन्होंने बताये थे, वे इस बात के साक्षी हैं कि उनके कथन में सत्य है। अशोक और यश ने उनकी बातों का विश्वास किया। अशोक को पहले से ही शक था कि यह काम सुशेम का ही होगा। इसके पहले भी उसने उसकी हत्या का प्रयत्न किया था किन्तु वह सफल नहीं हो पाया। उसे अब स्पष्ट मालूम हो गया कि सुशेम उसे अपने रास्ते का काँटा समझ रहा है और उसे हटाने के प्रबल प्रयत्नों में लगा हुआ है। वह जानता है कि सुशेम महत्वाकांक्षी है, दूसरों की उन्नति देखकर जलता है। वह अपने को गद्दी का वारिस मानता है। अपने को उन्नत कुल का समझता है और उसे केवल दासी-पुत्र। यद्यपि उसने

सुशेम को दो-तीन बार सावधान भी किया, फिर भी उसका स्वभाव नहीं बदला। इन्हीं बातों को लेकर वह थोड़ी देर तक सोच में पड़ गया। उसने सविस्तार उन स्त्रीयों से विषय जाना और सुनवाई पूरी होने के बाद अशोक ने तालियाँ बजायीं। दृढ़काय तीन सैनिक अशोक के सामने आकर खड़े हो गये। उन सबने अशोक को सादर प्रणाम किया। ''इन्हें यहाँ से ले जाकर वहीं भेजिये, जहाँ इन्हें जाना है'' अशोक ने आज्ञा दी।

नर्तकियों ने सविनय पूछा, ''प्रभु, हमें कहाँ भेज रहे हैं ?''

''जहाँ तुम मुझे भेजना चाहती थीं'' अशोक ने कहा।

''नहीं, नहीं हमें मत मारिये'' कहती हुई वे नर्तकियाँ ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगीं।

''रोना मत अभागिन युवतियो, रोना मत। शाक्य मुनि गौतम बुद्ध की प्रार्थना कीजिये। जिस प्रकार उनकी अपार करुणा ने युवराज की रक्षा की, उसी प्रकार वे आपकी भी रक्षा करेंगे।'' मधुर स्वर सभी को सुनायी पड़ा।

सबने उस ओर मुड़कर देखा।

विदीशा मुस्कुराती हुई वहाँ आयी।

''बहन, अनावश्यक आशाएँ उनमें मत जगाओ।'' यश ने कहा।

''मैं उनमें आशाएँ जगा नहीं रही हूँ। तुम्हीं ने उनमें आशाएँ जगायी थीं कि उन्हें प्राणों की भिक्षा प्राप्त होगी। क्या अपना दिया हुआ वचन क्षण भर में भूल गये ?'' विदीशा ने भाई से पूछा।

''विवेकी हो, बुद्धिमान हो, क्यों इस प्रकार अर्थहीन व शुष्क बातें कर रही हो। मैंने कब कहा कि इन्हें प्राण-भिक्षा दूँगा ? असल में प्राण-भिक्षा देने का मुझे क्या हक़ है ?'' यश ने कटुता-भरे स्वर में पूछा।

''तुम्हीं ने यह कहकर इन्हें सावधान किया था कि सच बोलो, नहीं तो मार डालूँगा। इस बात का यही अर्थ हुआ न कि सच बोला जाए तो वे मारी नहीं जायेंगीं। अब अपने वचन से कैसे मुकर सकते हो ?'' विदीशा ने गंभीर स्वर में प्रश्न किया।

''अद्‌भुत' कहते हुए तालियाँ बजाते हुए अशोक ने यश से कहा ''मित्र, तुम बहुत बड़े भाग्यवान हो, जिसे ऐसी कुशाग्र बुद्धि की बहन मिली।''

यश अवाक् रह गया। उसे इस बात पर

आश्चर्य हुआ कि युवराज अशोक बहन विदीशा का समर्थन कर रहे हैं; उसके तर्क से सहमत हैं। विदीशा आनंद से एक क्षण भर के लिए हक्कीबक्की रह गयी। विदीशा की बातें सुनते ही नर्तकियों की आँखें कृतज्ञता-भाव से भर आयीं।

यश ने अपने को संभालते हुए अशोक से पूछा, "युवराज क्या आप सचमुच चाहते हैं कि ये धोखेबाज़ नर्तकियाँ छोड़ दी जाएँ?"

"विदीशा जो चाहती हैं, वही होगा। हमें उनकी बात माननी ही पड़ेगी, किन्तु इसके लिए उन्हें दाम चुकाना होगा।" कहते हुए अशोक ने विदीशा को देखा।

"मेरी शक्ति के बाहर न हो तो अवश्य चुकाऊँगी युवराज। कहिये, वह दाम क्या है?" विदीशा ने पूछा।

"वह दाम आप ही चुका सकती हैं। बहुत ही मूल्यवान है। मैं कह नहीं पा रहा हूँ।" थोड़ी देर रुककर फिर अशोक ने कहा "यह बात मैं आपके भाई यश को बताऊँगा।"

अब यश को यह जानने में देर नहीं लगी कि युवराज उसकी बहन विदीशा से प्रेम कर रहे हैं। अपने हृदय की बात उसके समक्ष बताने में सकुचा रहे हैं। मन ही मन वह भी बहुत ही हर्षित हुआ। मुस्कुराते हुए बहन को देखा। वह सिर झुकाकर वहाँ से चली गयी।

अशोक ने आज्ञा दी कि नर्तकियों और क़ैदी पुरुषों को दूर ले जाया जाए।

☆ ☆ ☆

युवराज अशोक अपनी पुत्री से विवाह

करना चाहते हैं, यश से यह जानकर शाक्य-नायक और उसकी पानी को पहले विश्वास ही नहीं हुआ। आनंद व आश्चर्य में डूबे वे दोनों थोड़ी देर तक मौन रह गये। मुँह से बात ही नहीं निकली।

यश ने कहा, "युवराज अशोक उच्च वंश के हैं। सभी राजकुमारों की तरह वे भी महत्वाकांक्षी हैं और अधिकार के प्रति प्रीति है। किन्तु सबका कहना है कि वे उन्नत स्वभाव के तथा कोमल हृदय के हैं। मेरा भी यही अभिप्राय है। सुसंपन्न अवंती राज्य के राज-प्रतिनिधि बननेवाले हैं। उस पद को शीघ्र ही स्वीकार करनेवाले हैं। उनसे विवाह हो जाए तो हमारी विदीशा का रानी बन जाना निश्चित है।"

वहाँ तभी आयी विदीशा ने कहा, "बहन

के बारे में क्या तुम्हारी यही राय है ? तुमने मेरे बारे में इतना ही समझा और जाना ? क्या तुम समझते हो कि रानी बनने से मुझे आनंद होगा ?''

यश को कोई उत्तर नहीं सूझा, इसलिए चुप रह गया। पर उसने बाद हँसकर कहा, ''हाँ बहन, कौन ऐसा भाई होगा, जो अपनी बहन को रानी होती हुई देखकर खुश नहीं होगा। इसमें ग़लती ही क्या है ? बताओ तो सही, युवराज के प्रस्ताव को स्वीकार करने से तुम क्यों सकुचा रही हो ? मैं तुम्हारा मनोभाव समझ नहीं पाया।''

विदीशा की माँ ने कहा, ''पुत्र, पहले मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि युवराज सचमुच हमारी पुत्री से विवाह करने की इच्छा रखते हैं। मेरा तो पक्का विश्वास है कि हमारी पुत्री कोई साधारण कन्या नहीं है। घटी घटनाओं का अवलोकन करते हुए मुझे लगता है कि इन घटनाओं के पीछे दैव निर्णय है। युवराज को हमारे ही गाँव में क्यों ठहरना चाहिये ? अगाध में गिरते समय उन्हें बचाने के लिए हमारी पुत्री को किन्होंने वहाँ भेजा ? अशोक की हत्या के षड्यंत्रकारी तुम दोनों को कैसे दिखायी पड़े ? क्या यह सब कुछ विचित्र नहीं लगता ? क्या नहीं लगता कि इन सबके पीछे किसी अदृश्य शक्ति का हाथ है।''

अब तक मौन विदीशा के पिता ने कहा ''मुझे लगता है कि मेरी पुत्री का जीवन युवराज के जीवन से जुड़ा हुआ है। नहीं तो क्या एक ही रात और एक ही दिन में युवराज को मरने से दो बार बचा पाती ?''

उनकी बातें सुनकर विदीशा की आँखों से आँसू बह पड़े। चुपचाप वह भवन से बाहर आयी और हाथ जोड़कर आकाश की ओर देखती हुई बोली ''तथागत बुद्ध ! यह कैसी परीक्षा है ? व्याकुल व आंदोलित इस मानसिक स्थिति से निकलने का मार्ग दिखाओ। मेरी तो इच्छा है कि मैं सन्यासिनी बनूँ और तुम्हारे दशयि मार्ग पर चलकर निर्वाण प्राप्त करूँ। पद या ऐहिक सुखों के प्रति मेरा कोई लगाव नहीं है। मैं असमंजस स्थिति में फंस गयी हूँ। मुझे ऐसी डोलायमान स्थिति का सामना क्यों करना पड़ रहा है?'' यों उसने प्रार्थना की।

इसके बाद यश के पास जाकर विदीशा ने कहा ''मैं निर्णय नहीं कर पा रही हूँ कि अच्छा क्या है और बुरा क्या है ? सच कहूँ तो मुझे इस विषय में अपने माता-पिता की

सलाहों पर भी विश्वास नहीं है। क्योंकि वे मेरा ऐहिक सुख ही चाहते हैं। कोई भी माँ-बाप यही चाहेंगे कि उनकी पुत्री का विवाह योग्य व्यक्ति से हो। उनकी इच्छा जब पूर्ण होती हो तब वे बहुत ही आनंदित होते हैं और समझते हैं कि उनका कर्तव्य पूरा हो गया; भगवान उनपर दयालू हैं। इस विषय में मुझे सही सलाह देनेवाले व्यक्ति एक ही हैं और वे हैं गुरुदेव उपगुप्त।''

यश ने कहा ''ठीक है, उनकी सलाह लो।'' उसके माता-पिता ने भी पुत्री की इच्छा स्वीकार की।

मालूम हुआ कि उपगुप्त दूसरे ही दिन विदिशा आनेवाले हैं। यश द्वारा विदीशा का अभिप्राय अशोक को ज्ञात हुआ। उसने तब तक प्रतीक्षा करने का निश्चय किया।

प्रातःकाल ही विदीशा अपने माता-पिता व भाई के साथ विहार गयी, जहाँ उपगुप्त ठहरे थे। माता-पिता व यश विहार के बाहर ही रुक गये। विदीशा मात्र गुरु उपगुप्त से मिलने विहार के अंदर गयी।

थोड़ी देर बाद विदीशा बाहर आयी। उसका वदन गंभीर था। उसके मुख से कोई भी भाव व्यक्त नहीं हो रहा था। उसके गंभीर मुख को देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि गुरु उपगुप्त ने उसे क्या उपदेश दिया। बड़ी उत्कंठा से सब उसे देखने लगे। उसने पेड़ के तले खड़े अशोक को देखकर भाई यश से कहा, ''जो हमारे निकट आना चाहते हैं; वे दूर क्यों खड़े हैं ?''

यश का चेहरा खुशी से खिल उठा। वह दौड़ा-दौड़ा गया और अशोक को अपने माँ-बाप के पास ले आया।

''युवराज, गुरुदेव ने आपके प्रस्ताव को स्वीकार करने की अनुमति दी। किन्तु मेरी एक विनती है। बुद्ध के दिखाये धर्म-मार्ग पर चलने के लिए मुझे आपका सहयोग और स्वीकृति चाहिये।'' विदीशा ने प्रशांत कंठ स्वर में कहा।

''विदीशा की विनती को हृदयपूर्वक स्वीकार कर रहा हूँ।'' अशोक ने हर्ष-विभोर हो कहा। ''कृतज्ञ हूँ। गुरुदेव का विश्वास है कि आपसे मेरा विवाह तथागत को स्वीकार है। अपने गुरु के प्रति मेरा अपार विश्वास है। उनकी सलाह का पालन करने के लिए सन्नद्ध हूँ।'' कहकर विदीशा ने माँ-बाप को, अशोक को, यश को झुककर नमस्कार किया।

☆ ☆ ☆

विवाह की अनुमति माँगते हुए अशोक और शाक्यनायक ने बिंदुसार को एक दूत के द्वारा ख़त भेजे। परंतु वे ख़त बिंदुसार तक नहीं पहुँचे। सुशेम के एक मित्र ने दूत को भारी रक़म दी और उन ख़तों को जला दिया। सुशेम के मित्रों ने एक ऐसा पत्र तैयार करवाया, जिसमें लिखा गया कि राजा बिंदुसार इस विवाह के लिए पूर्ण रूप से सहमत हैं। बिंदुसार की जानकारी के बिना ही वह पत्र अशोक को भेजा गया।

अवंती के राज-प्रतिनिधि का पद स्वीकार करने के बाद अशोक ने विदीशा से विवाह किया।

एक दिन सुशेम ने अपने पिता से कहा "सुना है कि अशोक ने शाक्यनायक की पुत्री से विवाह किया। गुप्तचरों द्वारा यह बात मालूम हुई।"

"क्या ? पिता की जानकारी के बिना ही पुत्र ने विवाह कर लिया ? वह भी राजकुमार का एक साधारण स्त्री से विवाह। एक साधारण स्त्री की कोख से जन्मे ऐसे पुत्र की बुद्धि भला और कैसी हो सकती है ?" ऐसा सोचकर बिंदुसार चुप रह गया। उसमें विरक्ति की भावना घर कर गयी। पिता के इस रुख से सुशेम बहुत खुश हुआ।

काल बीतता गया। पुनः तक्षशिला में विद्रोह छिड़ गया। बिंदुसार ने सुशेम से कहा "अशोक को उज्जयिनी से बुलवाकर तक्षशिला भिजवाना मुश्किल है। तुम या तुम्हारे भाइयों में से कोई तक्षशिला जाए और विद्रोह को कुचल डाले।"

सुशेम को अपने सामर्थ्य पर विश्वास नहीं था। अगर जाने से इनकार करेगा तो उसकी पोल खुल जायेगी, उसकी असमर्थता साबित होगी। इसलिए उसने कहा, "पिताश्री, तक्षशिला जाकर विद्रोह को कुचल डालना अपना कर्तव्य व जिम्मेदारी मानता हूँ। अशोक ने उसी समय सभी शत्रुओं का नाश किया होता तो यह नौबत न आती। इतनी जल्दी पुनः यह विद्रोह खड़ा न होता; ऐसी स्थिति का सामना न करना पड़ता।"

"मैं समझता हूँ कि इसमें ग्रीकों का हाथ है। उन्हें मालूम है कि मैं अस्वस्थ हूँ। वे भूल नहीं पाये कि अपने भारत के भू-भाग को मौर्यों ने अपने अधीन कर लिया"। बिंदुसार ने कहा। -सशेष

कविराज व्याघ्रेश्वर

धुन का पक्का विक्रमार्क फिर से पेड़ के पास गया। पेड़ से शव को उतारा और कंधे पर डाल लिया। शव को ढोता हुआ श्मशान की ओर बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा "राजन्, मेरा विश्वास है कि तुम जैसे हठी, परिश्रमी संसार में कहीं भी देखने को नहीं मिलेंगे। इतनी असफलताओं के बाद भी कोई भी अपनी हार मान लेगा और अपना इरादा बदल लेगा। परंतु तुम तो अपनी जिद पर अड़े हुए हो। खुद परेशान हो रहे हो और मुझे भी परेशान कर रहे हो। शायद तुम्हारा ख्याल है कि मैं ही किसी दिन अपनी हार मान लूँगा। किन्तु याद रखो, मैं भी तुमसे कम जिद्दी नहीं हूँ। मेरी बात ध्यान से सुनो। तुम जैसे सत्यव्रती, हठी और धुन के पक्के कभी-कभी बिना सोचे-विचारे भाव-आवेश के वश हो जाते हैं और अपना आत्मगौरव भी खो बैठते हैं। उन्हें अपने को समर्पित कर देते हैं, जिन्होंने

बैताल कथा

पहले उनका अनादर किया, जिनकी दृष्टि में उनका कोई मूल्य नहीं। ऐसा आत्म-समर्पण महायोद्धा व वीर शूरों के लिए ही नहीं बल्कि कवियों के लिए भी समुचित नहीं। तुम्हें सावधान करने, सजग होने कलानाथ नामक कवि की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।" फिर बेताल उस कवि की कहानी यों सुनाने लगा।

बहुत पहले की बात है। सिंहपुरी के राजा के आस्थान में व्याघ्रेश्वर नामक एक कवि था। उसने समस्त शास्त्रों का अध्ययन किया। अष्टादश पुराणों में पांडित्य प्राप्त किया। वेद-उपनिषदों का सार ग्रहण किया। इसलिए उसकी कविता अर्थपूर्ण, भावयुक्त व रसवत्तर होती थी। राजा ने उसकी विशिष्टता को दृष्टि में रखते हुए उसे कितने ही अधिकार प्रदान किये। राजा कभी-कभी उसे अपना प्रतिनिधि बनाकर नगर के बाहर भी भेजा करता था। व्याघ्रेश्वर लोगों से स्वयं मिलता और उनसे मालूम करता था कि उनकी क्या-क्या शिकायतें हैं और क्या-क्या माँगें हैं। भ्रमण से लौटने के बाद राजा को ये विवरण देता और प्रजा की शिकायतों को दूर कराता था; उनकी माँगें पूरी कराता था।

राजा उसे बहुत चाहता था। उसकी हर बात मानता था, इसलिए बहुत-से लोग उससे मिलने आते थे और उसके द्वारा अपना काम निकालने का प्रयत्न करते थे। इस कारण साधारण मनुष्यों के लिए व्याघ्रेश्वर से मिल पाना कठिन हो जाता था। राज-दर्शन शायद मिल जाए, पर व्याघ्रेश्वर का दर्शन दुर्लभ हो गया था।

उसी देश के रामपुर नामक एक गाँव में कलानाथ नामक एक युवक था। साहित्य में उसकी अभिरुचि थी। बचपन से ही प्रमुख कवियों के काव्यों का पठन करता था। उन्हें पढ़ते समय जोश में आ जाता और आशु कविताएँ लोगों को सुनाया करता था। एक बार एक महाकवि उस गाँव में आया। उसने कलानाथ की कविता सुनी तो उसे आशीर्वाद दिया और कहा "पुत्र, तुम सहज कवि हो। अच्छी तरह साधना करो। किसी दिन विश्व-विख्यात हो जाओगे।"

तब से कलानाथ में कविता के प्रति श्रद्धा और बढ़ गयी। प्रारंभ में आशु पद्य सुनाता था, पर बीस वर्ष की आयु में पहुँचते-पहुँचते तीन काव्यों की भी रचना की। जिन-जिन पंडितों ने वे काव्य पढ़े, उसकी भरपूर प्रशंसा की। कुछ पंडितों ने कहा भी "लगता है,

तुम सरस्वती पुत्र हो। एक बार व्याघ्रेश्वर से क्यों नहीं मिल लेते। उन्हें अपनी कविता सुनाओ। तुम्हारी सही पहचान होगी। तुम्हारी मान्यता होगी।''

अपने काव्यों को लेकर व्याघ्रेश्वर से मिलने कलानाथ सिंहपुरी गया। जब वह उसके घर गया तब रखवाले ने कहा ''तुम्हारा काम क्या है, बताओ। उन्हें बता दूँगा। फिर तुम्हारा भाग्य।''

कलानाथ ने अपने काव्यों में से चंद पद्यों को चुना और ताल-पत्रों पर लिखा। उन्हें उसे देते हुए कहा ''इन पद्यों पर मैं कविश्री का अभिप्राय जानना चाहता हूँ।''

रखवाले ने उससे तालपत्र लिये और उसे आश्चर्य से देखते हुए कहा ''बस इतना ही। क्या तुम्हें और कुछ नहीं चाहिये ? कविश्री का दिल बड़ा है, बड़े ही अच्छे स्वभाव के हैं, उदार हैं। तुम्हें जो भी मदद चाहिये, करेंगे।''

कलानाथ ने कहा कि मुझे और कोई सहायता नहीं चाहिये। रखवाला अंदर गया और व्याघ्रेश्वर से कलानाथ के बारे में बताया। उस समय बहुत-से लोग उसके पास बैठे हुए थे। इसलिए उन तालपत्रों को अपने शिष्य को सौंपते हुए कहा ''इन्हें पढ़ो और अपना अभिप्राय लिखो। मैं हस्ताक्षर कर दूँगा।''

शिष्य ने पद्यों को ध्यान से पढ़ा और कहा ''गुरुवर, ये पद्य असाधारण लगते हैं। क्या इस कवि को एक बार अंदर बुलाऊँ?''

''पुत्र, अब यहाँ बहुत-से लोग मौजूद हैं। उस कवि ने तो केवल मेरा अभिप्राय जानना चाहा। जो मांगता है दो और भेज दो।'' शिष्य ने अपना अभिप्राय लिख दिया तो गुरू

ने उसपर अपना हस्ताक्षर कर दिया। रखवाले को देकर भेज दिया। इस बात पर कलानाथ को बड़ी निराशा हुई कि व्याघ्रेश्वर ने उसे अंदर नहीं बुलाया; उससे भेंट नहीं हो पायी। वह वापस चला गया।

कुछ समय बाद राजा के आदेश के अनुसार व्याघ्रेश्वर देश में भ्रमण करने निकला। एक दिन वह रामपुर पहुँचा। वह हाथी पर सवार होकर आया। उसके साथ-साथ और भी बहुत लोग आये। उसका सत्कार भी ग्रामवासियों ने बड़े वैभव के साथ किया।

व्याघ्रेश्वर उस गाँव में दो दिन रहा। पहले ही दिन ग्रामवासी एक-एक करके आये और अपनी समस्याएँ उसे बतायीं। ग्रामाधिकारी ने व्याघ्रेश्वर से कहा ''महाशय, जनता की समस्याएँ क्या हैं, उनसे समक्ष

मिलकर जान गये । इन समस्याओं के परिष्कार के लिए हमें आर्थिक सहायता चाहिए । राजा से बताकर आप ही हमें यह सहायता दिला सकेंगे ।''

''हाँ, राजा मेरी बात को मानते हैं । अवश्य ही जितना मुझसे हो सके, मैं करूँगा । मैं कल गाँव देखना चाहूँगा । इसके लिए आवश्यक प्रबंध कीजियेगा ।'' व्याघ्रेश्वर ने ग्रामाधिकारी से कहा ।

दूसरे दिन व्याघ्रेश्वर गाँव देखने निकला । उसे देखने ग्रामवासियों की भीड़ लग गयी । उन्हें काबू में रखना मुश्किल हो गया । दुपहर तक व्याघ्रेश्वर गाँव में घूमता ही रहा । फिर भी सभी ग्रामीण उसका दर्शन नहीं कर पाये । लौटने के बाद भोजन करके व्याघ्रेश्वर ने ग्रामाधिकारी से कहा ''गाँव में कवि हों तो कहिये । मैं उनकी सहायता करूँगा ।''

''महोदय, हमारे गाँव में दो-तीन कवि हैं । सौ लोगों को साहित्य से परिचय है । वे सबके सब आपसे मिलने के लिए उत्सुक हैं । क्या गोष्ठी का आयोजन करूँ?'' उत्साह-भरे स्वर में ग्रामाधिकारी ने पूछा ।

''गोष्ठी में अधिक लोग भाग नहीं ले सकते । आपने कहा कि बहुत लोग मुझसे मिलने की इच्छा रखते हैं । इसलिए अच्छा यही होगा कि एक सभा का आयोजन किया जाए । मैं उस सभा में भाषण दूँगा । जो-जो अपनी-अपनी समस्याएँ मुझे बताना चाहते हैं, वे ताल-पत्रों पर पता सहित लिखकर दें तो मैं उनपर विचार करूँगा और आवश्यक कार्रवाई करूँगा ।'' व्याघ्रेश्वर ने कहा ।

इस विषय की घोषणा हुई । लोगों की भीड़ लग गयी । व्याघ्रेश्वर ने बड़ा ही रोचक भाषण दिया । तालियाँ बजाकर उपस्थित सबों ने अपना हर्ष प्रकट किया ।

सभा की समाप्ति के बाद दो कवि तथा तीन-चार साहित्य-प्रिय व्याघ्रेश्वर से मिले । उसने उन्हें वचन दिया कि उनके उपयोगार्थ गाँव में शीघ्र ही एक ग्रंथालय का प्रबंध होगा ।

तब ग्रामाधिकारी ने जाना कि जो आये, उनमें कलानाथ नहीं है । उसे यह भी मालूम हुआ कि कलानाथ ने व्याघ्रेश्वर से मिलने की दिशा में अब तक कोई प्रयत्न ही नहीं किया । वह कलानाथ और उसकी कविताओं को बहुत चाहता था । उसकी इच्छा हुई कि दोनों को एक बार मिला दूँ तो अच्छा होगा । उसने कलानाथ को ख़बर भिजवायी कि वह

तुरंत व्याघ्रेश्वर से मिलने आये।

किन्तु अपने को व्यस्त बताता हुआ कलानाथ नहीं गया। समय बीतता गया। व्याघ्रेश्वर अपने को असंतृप्त महसूस करने लगा। इहलोक के वैभवों से उसका हृदय उचट गया। सांसारिक बंधनों के प्रति उसमें विरक्ति उत्पन्न हो गयी। आख़िर उसने आस्थान-पद भी त्याग दिया। संपत्ति भी पुत्रों में बाँट दी। समीप ही के अरण्य में आश्रम बनाया और वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार किया। उसकी पत्नी भी उसी के साथ रहने लगी।

यह बात कलानाथ को मालूम हुई। अपने काव्यों को लेकर वह व्याघ्रेश्वर से मिलने गया। आश्रम पहुँचते-पहुँचते राह में उसे कई तक़लीफ़ों का सामना करना पड़ा। आख़िर उसने व्याघ्रेश्वर का दर्शन कर ही लिया।

उस समय व्याघ्रेश्वर और उसकी पत्नी मात्र आश्रम में थे। उनकी सेवा करने के लिए एक परिचारक और एक परिचारिका भी थे। वे तब पास ही के सरोवर के पास गये हुए थे।

कलानाथ ने जब आश्रम में प्रवेश किया तब व्याघ्रेश्वर अपनी पत्नी को भागवत पुराण सुना रहा था। वह तन्मय होकर, आँखें मूँद कर सुन रही थी। पूरा सुनने के बाद उसने कहा "यह मेरा सौभाग्य है कि आपके मुँह से यह पुराण सुन रही हूँ। मेरा जन्म सार्थक हो गया।"

"मेरे मुँह से ही नहीं, किसी के भी मुँह से सुनो, यह अद्‌भुत पुराण है। जिस दिन ऐसे महान काव्य की रचना कर सकूँगा, उसी दिन मैं सच्चे अर्थों में कवि बनूँगा।" व्याघ्रेश्वर ने कहा।

"आपकी बात को असत्य कहने का साहस करने के योग्य नहीं हूँ। मैं मानता और जानता हूँ कि आप ऐसे काव्यों की रचना
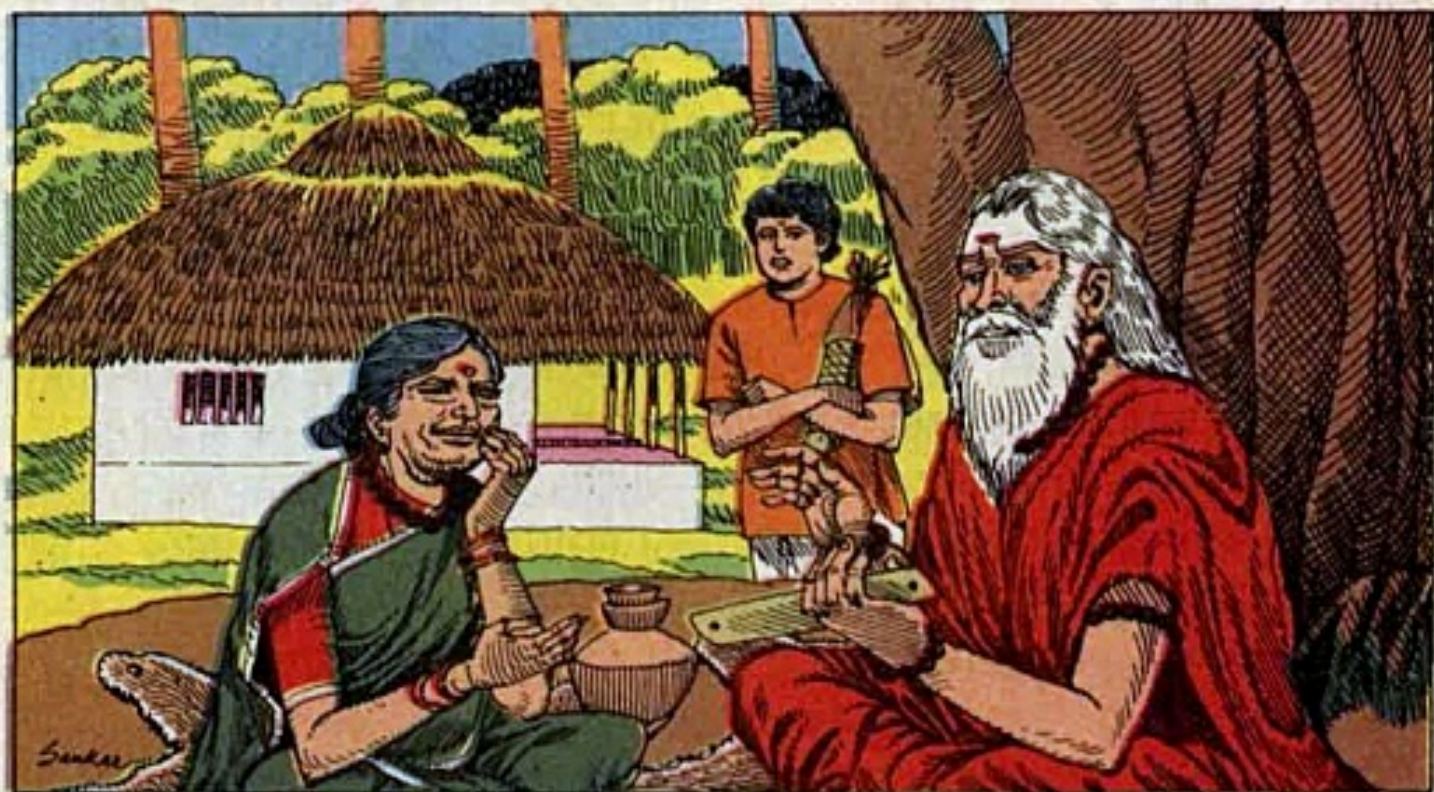
कर चुके हैं, जो किसी भी महाकवि की रचनाओं के समान हैं ।'' कलानाथ ने अकस्मात् कह दिया ।

तब व्याघ्रेश्वर ने कलानाथ को देखा । उससे उसके बारे में विवरण जाना । कहा कि स्वरचित किसी काव्य के कुछ पद्य सुनाओ ।

कलानाथ जब पद्य सुना रहा था तब व्याघ्रेश्वर ने उन्हें ध्यान से सुना । कहा ''पुत्र, तुम सचमुच सरस्वती पुत्र हो । किन्तु तुम्हारे पद्यों में कहीं-कहीं व्याकरण दोष हैं । उन्हें सुधारना कोई कठिन बात नहीं । किन्तु तुम उन्हें सुधार नहीं लोगे तो तुम्हारी कविता फीकी लगेगी ।''

''महानुभाव, आपने इन पद्यों को पहले ही पढ़ा था । तब आपने व्याकरण दोषों पर प्रकाश नहीं डाला ।'' कलानाथ ने कहा ।

व्याघ्रेश्वर को जब मालूम हुआ कि यह कैसे हुआ तब उसने कहा ''वत्स, उस दिन मेरे शिष्य ने पढ़ा था । मैं पढ़ नहीं पाया । उस दिन तुमने मेरा अभिप्राय मात्र पूछा था । उसी दिन मुझसे समक्ष मिलने की अनुमति माँगते तो अच्छा होता । अपना अभिप्राय स्वयं सुनाता । उसी दिन तुम्हारे व्याकरण के दोषों पर प्रकाश डालता ।''

कलानाथ ने हँसते हुए कहा ''मेरी आशा थी कि मेरे पद्य पढ़ने के बाद, मेरे बारे में जानने के बाद अवश्य ही आप दर्शन की अनुमति देंगे । उस दिन मेरे पद्यों को आपने सराहा । मुझे प्रसन्नता हुई अवश्य । किन्तु आज मेरे व्याकरण दोषों पर आपने जो प्रकाश डाला, उससे और भी प्रसन्न हूँ । आपके उस अभिप्राय से, यह अभिप्राय मेरे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है । कुछ समय तक आपकी सेवा करने का सदवकाश प्रदान कीजिये । यही मेरी एकमात्र इच्छा है ।''

बेताल ने कहानी सुनायी और कहा ''राजन्, अनेकों कवि-पंडितों से प्रशंसित कलानाथ का व्यवहार क्या विचित्र व असंबद्ध नहीं लगता? क्या नहीं लगता कि उसने आत्म-समर्पण कर दिया? अपना स्वाभिमान खो दिया? व्याघ्रेश्वर जब उसके गाँव आया था तो ग्रामाधिकारी ने संदेश भेजा कि आओ और कविराज व्याघ्रेश्वर से मिलो, किन्तु उसने उससे मिलने से अस्वीकार कर दिया । पर वह उसी व्याघ्रेश्वर से मिलने कष्ट झेलते हुए जंगल के मार्ग से आया । उसने ऐसा क्यों किया ? क्या यह उसकी बुद्धि-हीनता का द्योतक नहीं? यही नहीं, उसने व्याघ्रेश्वर से

प्रार्थना भी की कि उसे उसकी सेवा करने का सदवकाश प्रदान करें। इन सभी बातों को दृष्टि में रखते हुए मुझे लगता है कि कलानाथ की मति भ्रष्ट हो गयी। वह असंतुलित युवक है। मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारा सिर फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने कहा ''कलानाथ जब सिंहपुरी गया था, तब उसकी आशा थी कि उसकी कविता पढ़ने के बाद व्याघ्रेश्वर अवश्य ही उसे दर्शन देंगे। किन्तु उसने अपना अभिप्राय मात्र लिख भेजा था। इस कारण कलानाथ को लगा कि कविता के प्रति व्याघ्रेश्वर में रुचि घट गयी और वे अब केवल अपनी व्यक्तिगत प्रसिद्धि का उपयोग करके साधारण जनता की मदद पहुँचा रहे हैं। कविता के क्षेत्र को छोड़कर व्याघ्रेश्वर से कलानाथ का अपना कोई काम नहीं। इसी ग़लतफ़हमी के कारण वह व्याघ्रेश्वर से अपने गाँव में भी मिलने नहीं आया। उसे चाहिये - केवल साहित्य-संबंधी चर्चा। उनके दर्शन से उसे कुछ लेना-देना नहीं है। जिस क्षण उसे ज्ञात हुआ कि व्याघ्रेश्वर ने आस्थान छोड़ दिया और वानप्रस्थ आश्रम स्वीकार करके जंगल में रह रहे हैं, उसी क्षण उसे दृढ़ विश्वास हो गया कि उनके दर्शन से मेरा भला होगा। इसी कारण तक़लीफ़ें झेलता हुआ वह आश्रम पहुँचा। बातों-बातों में व्याघ्रेश्वर ने बताया कि कलानाथ की कविताओं पर जो अभिप्राय व्यक्त किया गया है, वह उसका अपना नहीं है, बल्कि उसके शिष्य का है। अब उसके पद्यों को सुनने के बाद अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए कहा कि उसमें व्याकरण दोष हैं और उन्हें सुधार लेना नितांत अवश्यक है। इससे कलानाथ स्पष्ट रूप से जान गया कि व्याघ्रेश्वर कितने उत्तम और महान कवि हैं। अब उसे उनमें सच्चा कवि दिखायी पड़ा। इसीलिए सेवा करने का अवकाश माँगा। इन कारणों के बल पर यह स्पष्ट रूप से गोचर होता है कि कलानाथ ने न ही अपने आत्म-गौरव को खोया अथवा न ही उसकी मति भ्रष्ट हुई। तुम्हारे संदेह निराधार हैं।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और पुनः पेड़ पर जा बैठा।

आधार - श्री रामकमल की रचना

सोमसेन का चित्र

हेलापुरी में हर साल चित्रलेखन प्रदर्शिनी चलायी जाती है। इस प्रदर्शिनीशाला में प्रसिद्ध चित्रकारों के चित्रों का प्रदर्शन तो होता ही है, साथ ही उन चित्रकारों के चित्रों का प्रदर्शन भी होता है, जो प्रसिद्ध नहीं हैं अथवा जिन्होंने अभी-अभी इस क्षेत्र में प्रवेश किया।

हर साल की तरह इस साल भी चित्रों का प्रदर्शन हो रहा है। देश के कोने-कोने से आये प्रसिद्ध चित्रकारों के चित्र दिखाये जा रहे हैं। नये-नये चित्रकारों के चित्र भी प्रदर्शित हो रहे हैं। इन चित्रों को देखने के लिए बहुत बड़ी संख्या में कला-रसिक आ रहे हैं।

सुगंधिपुर से आया सोमसेन नामक चित्रकार भी अपने चित्रों को लेकर आया। उसके चित्र भी प्रदर्शिनी में सजाये गये।

सोमसेन जिस सराय में ठहरा था, उसी सराय में रहने के लिए शिवगिरि का विलास भी आया। बातों-बातों में सोमसेन के बारे में जानकारी प्राप्त करने के बाद विलास ने कहा "आज मैं प्रदर्शनीशाला गया। वहाँ आपके चित्र के सामने एक घंटे तक उसे देखते हुए खड़ा रह गया।"

सोमसेन ने बहुत ही खुश होते हुए कहा "मेरा चित्र आपको बहुत पसंद आया, इसके लिए मैं आपका शुक्र-गुज़ार हूँ। मेरा चित्र आपको इतना पसंद आया?"

"पता नहीं क्यों, बाकी चित्रों के सामने काफ़ी भीड़ थी। इस कारण आपके चित्र के सामने एक घंटे तक मुझे अकेले ही खड़ा रहना पड़ा।" विलास ने कहा।

उसकी बातें सुनकर सोमसेन का चेहरा विवर्ण हो गया।

\- अर्जुन

उड़ीसा के तट के साथ

वर्णन : मीरा नायर ◆ चित्रकार : के. एस. गोपकुमार

उड़ीसा
पुरी
चिल्का

तट से चंद किलोमीटर हट कर पश्चिम में जाएं तो हम *बोमकाई* पहुंचते हैं. यह नन्हा-सा गांव साड़ियों के लिए सुप्रसिद्ध है. कपड़े की बुनाई उड़ीसा की परंपरागत हस्तकला है और कुटीरोद्योग के रूप में वह सारे उड़ीसा में लाखों परिवारों की आजीविका का साधन है. आप कोई बोमकाई साड़ी खरीदें तो इस बारे में निश्चिंत रह सकते हैं कि आपने एक अद्वितीय वस्तु खरीदी है. कारण, कोई भी दो बोमकाई साड़ियां हूबहू एक-सी नहीं होतीं.

तट के साथ तनिक उत्तर चलने पर हमें मिलती है चिल्का झील. इसका शुद्ध नाम 'चिलिका' है और उड़िया लोग वैसा ही बोलते भी हैं. चिल्का चारों ओर से जमीन से घिरी झीलों में भारत में सबसे बड़ी है और सिर्फ एक तंग मुहाना इसे बंगाल की खाड़ी से जोड़ता है. इसका क्षेत्रफल 1,100 वर्ग कि.मी. से अधिक है. गरमियों में इसका पानी खारा होता है, मगर बरसात में *दया* और *भार्गवी* नदियों का जलप्रवाह खारे पानी को बाहर खदेड़ देता है और झील मीठे पानी से लबालब भर जाती है. तब चिल्का देश की मीठे पानी की सबसे बड़ी झील बन जाती है.

झील के बीच-बीच में हरे-भरे टापू हैं. इनमें से एक नन्हे टापू पर झील की अधिष्ठात्री देवी *कालीजाई* का मंदिर है. इन टापुओं पर तरह-तरह के जलचर जीव मिलते हैं. सरदियों में यहां बत्तखों, सारसों, पेलिकनों और मटमैले बगुलों के झुंड के झुंड देखे जा सकते हैं.

चिल्का में चलनेवाली मच्छीमार नावों के पाल चटाई के बने और चौकोर होते हैं.

चिल्का या चिलिका झील

हमारा अगला पड़ाव है *पुरी* अथवा *जगन्नाथ पुरी*. पुराने जमाने में विदेशी इसे *पलौरा* कहते थे और इसका विदेशों के साथ घनिष्ठ व्यापारिक संबंध था – विशेष रूप से इंडोनीशिया से.

पुरी का समुद्री व्यापार तो अब समाप्त हो चुका है, किंतु अभी भी समुद्र उसका एक प्रमुख आकर्षण है. स्वास्थ्यवर्धक समुद्री हवा का सेवन करने उड़ीसा के अलावा बंगाल, आंध्र व मध्य प्रदेश से सैलानी बड़े पैमाने पर यहां आते हैं. उड़ीसा के राज्यपाल गरमियों में पुरी में रहते हैं.

किंतु पुरी की सबसे बड़ी महिमा यह है कि वह हिंदुओं के चार बड़े धामों में से एक है. (बाकी तीन धाम हैं – रामेश्वरम्, द्वारका और बदरीनाथ.) यहां का जगन्नाथ मंदिर सबसे पवित्र और सबसे विशाल हिंदू मंदिरों में से एक है. 12 वीं सदी ई. में राजा चोडगंग ने दक्षिण उड़ीसा से अपनी राजधानी हटा कर पुरी में स्थापित की और उस घटना की स्मृति में इस मंदिर का निर्माण करवाया. यहां भगवान जगन्नाथ की पूजा श्रीकृष्ण के रूप में उनके बड़े भाई बलभद्र (या बलराम) और छोटी बहन सुभद्रा के साथ की जाती है.

तीनों की मूर्तियां लकड़ी की बनायी जाती हैं और उनका रूप अनगढ़-सा रखा जाता है.

कथा है कि पुरी में भगवान विष्णु की नीलमणि की एक प्रतिमा थी. राजा इंद्रद्युम्न का मन उस पर चल गया और उसने उसे हथियाने का निश्चय किया. किंतु जब वह उसे लेने गया तो प्रतिमा अदृश्य हो गयी. अपनी बुरी नीयत पर राजा को बड़ी लज्जा आयी और प्रायश्चित्त के रूप में उसने उग्र तपस्या शुरू कर दी.

तब आकाशवाणी हुई कि हे राजा, भगवान का विग्रह तुम्हें समुद्र में लकड़ी के लट्ठे के रूप में मिलेगा. कुछ ही समय बाद समुद्रतट के पास एक लट्ठा पानी में तैरता हुआ मिला. राजा इंद्रद्युम्न ने उस लट्ठे से देवमूर्ति बनवाने का निश्चय किया. किंतु राजा के बढ़ई जब लट्ठे को तराशने बैठे तो उनके औजार टूट गये या उनके हाथ घायल हो गये. कोई भी बढ़ई मूर्ति तैयार न कर सका.

भगवान जगन्नाथ, श्रीबलभद्र और श्रीसुभद्रा की रथयात्रा
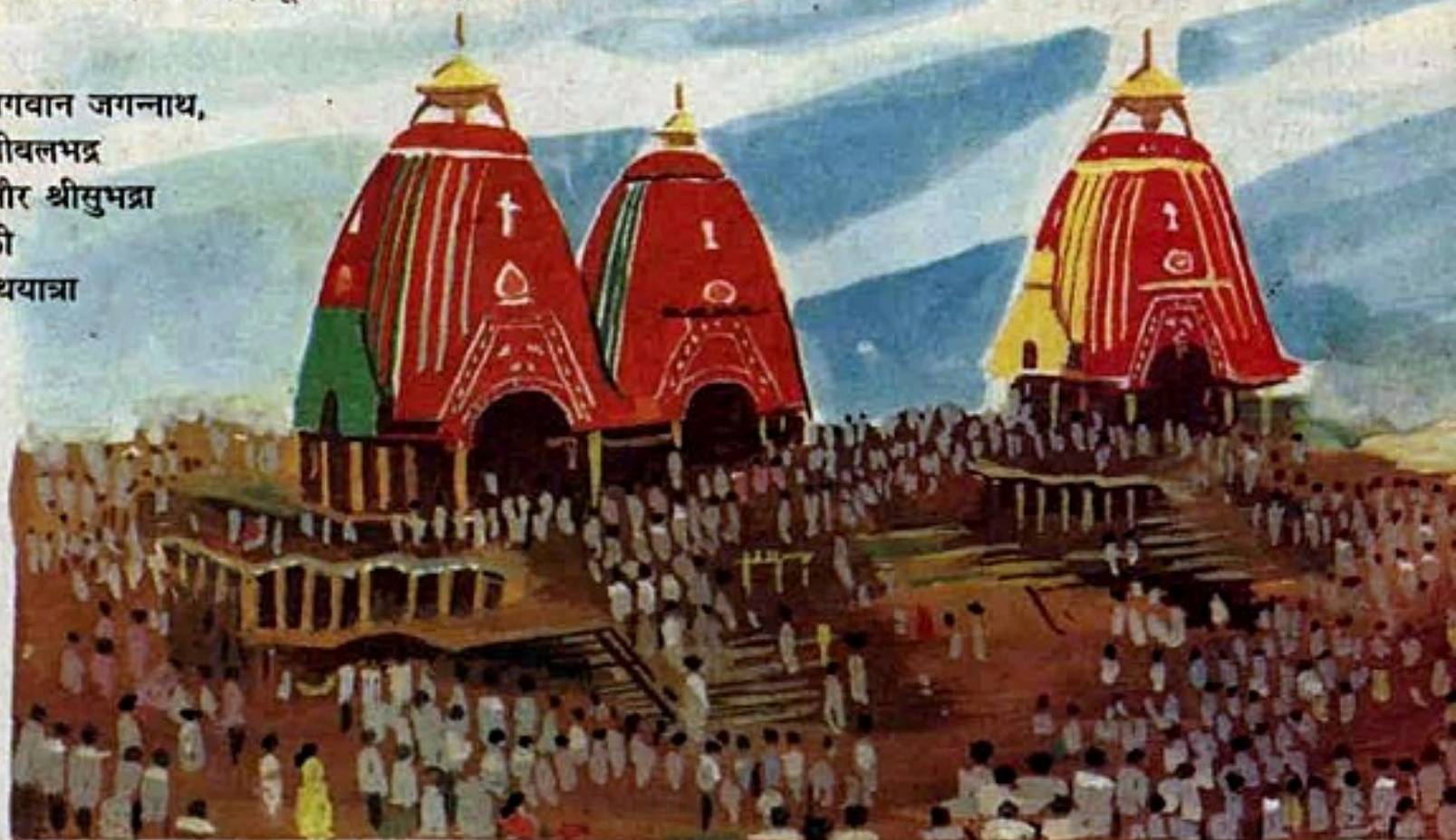
फिर एक दिन स्वयं भगवान जगन्नाथ एक बूढ़े बढ़ई के वेश में राजा के सामने प्रकट हुए और बोले कि मैं इक्कीस दिन में मूर्ति गढ़ कर तैयार कर दूंगा, किंतु शर्त यह है कि मूर्ति पूरी होने से पहले कोई उसे देखने का प्रयत्न न करे. राजा इंद्रद्युम्न मान गया. किंतु इक्कीस दिन पूरे होने से पहले ही वह मूर्ति को देखने को बेहद उत्सुक हो उठा. पर जब उसने कमरे के भीतर झांका तो वहां उसे तीन अधूरी मूर्तियों के सिवा कुछ दिखाई नहीं दिया. बूढ़ा बढ़ई वहां नहीं था और वह फिर कभी किसी के देखने में नहीं आया.

श्रीकृष्ण, बलभद्र और सुभद्रा की मूर्तियां हर बारह वर्षों में एक बार बदली जाती हैं.

नयी मूर्तियों के लिए केवल उन्हीं नीम वृक्षों से लकड़ी काटी जाती है, जो कुछ खास *दैताओं* यानी भक्तों को स्वप्न में दिखाई दिये हों. एक रहस्यमय वस्तु (कई विद्वानों की राय में भगवान बुद्ध का दांत) पुरानी जगन्नाथ मूर्ति में से निकाल कर नयी मूर्ति में रखी जाती है. यह काम एक पुजारी आंखों पर पट्टी बांध कर करता है. यही नहीं, उस समय उसके हाथ कपड़े की कई तहों में लिपटे रहते हैं, ताकि वह उस वस्तु को सीधे स्पर्श न कर सके, न पहचान सके. यह क्रिया 'नव कलेवर' नामक उत्सव में रथयात्रा से ठीक पहले संपन्न होती है.

रथयात्रा प्रतिवर्ष जुलाई महीने में आयोजित होती है. यह भगवान श्रीकृष्ण की गोकुल से मथुरा की यात्रा की स्मृति में होती है. इसमें श्रीकृष्ण, बलभद्र और सुभद्रा की प्रतिमाएं तीन विशाल रथों पर बैठा कर *गुंडीचा बाड़ी* ले जायी जाती हैं, जो कि भगवान जगन्नाथ का उद्यानगृह है. सबसे ऊंचा रथ भगवान जगन्नाथ यानी श्रीकृष्ण का होता है. उसके 16 चक्र होते हैं. रथ की ऊंचाई 14 मीटर और चौड़ाई 11 मीटर होती है.

यों तो गुंडीचा बाड़ी जगन्नाथ मंदिर से केवल एक मील दूर है, किंतु रथों को वहां पहुंचने में पूरा दिन लग जाता है. देश के कोने-कोने से लाखों भक्त रथयात्रा में भाग लेने आते हैं और रथों को खींचने में हाथ बंटाते हैं. उनमें से बहुतों की यह कोशिश रहती है कि किसी प्रकार भगवान जगन्नाथ के श्रीविग्रह को छू लें. क्योंकि यह मान्यता है कि जो वैसा कर ले वह जन्म-मरण के चक्कर से सदा के लिए छूट जाता है.

आठ दिन उद्यानगृह में निवास करने के बाद नौवें दिन मूर्तियां गाजे-बाजे के साथ जगन्नाथ मंदिर में लौट आती हैं. इसे 'बाहुड़ा यात्रा' (वापसी यात्रा) कहते हैं.

ओड़िसी नृत्य उड़ीसा की खास शास्त्रीय नृत्यशैली है. उसका विकास मंदिर के पूजा-अनुष्ठानों में से हुआ है. नर्तकियां साड़ी को इस तरह बांधती हैं कि वह कटि से पैरों तक पंखे की तरह फैली रहती है. तन पर वे चांदी के चमचमाते गहने और वेणी में कागज की लुगदी के फूल धारण करती हैं. इस तरह सुंदर सज्जा में जब वे देवमूर्तियों के समक्ष नृत्यांजलि अर्पित करती हैं, उनके नृत्य की शोभा देखते ही बनती है. ओड़िसी नृत्य के साथ प्रायः संस्कृत के कवि जयदेव की अमर रचना 'गीतगोविंद' की अष्टपदियां गायी जाती हैं. पुरी के समुद्रतट पर एक नये मंदिर में आदि शंकराचार्य और चैतन्य महाप्रभु के साथ जयदेव की प्रतिमा देखी जा सकती है. पुरी देश के उन चार स्थानों में से है, जहां आदि शंकराचार्य ने चार मुख्य मठ स्थापित किये. यहां का मठ *गोवर्धनपीठ* कहलाता है.

पुरी से 16 कि.मी. दूर नन्हा-सा रघुराजपुर है, जहां के चित्रकार सुंदर 'पटचित्र' बनाते हैं.

दस कि.मी. और आगे बढ़ें तो *साक्षीगोपाल* का मंदिर है, जिसमें श्रीकृष्ण की आदमकद मूर्ति बालक के रूप में है. किस्सा है कि एक बार दो ब्राह्मणों में झगड़ा हो गया और बालक के रूप में श्रीकृष्ण ने स्वयं आ कर साक्ष्य दिया.

ओड़िसी नृत्य की
एक मुद्रा

सर्प-मंत्र

तीमर नामक गाँव में परबत नामक एक छोटा-सा किसान रहता था। उसकी थोड़ी-सी ज़मीन थी। खेती करके ज़िन्दगी गुज़ारता था। बहुत सालों से साँप की काट का मंत्र सीखने की उसकी तीव्र इच्छा थी। किन्तु मंत्र सिखानेवाला कोई नहीं मिला।

एक बार वह अपने रिश्तेदार से मिलने पास ही के गाँव गया। उसने अपने रिश्तेदार से कहा "सर्प-मंत्र जानने की मेरी बड़ी इच्छा है। क्या तुम्हारे गाँव में कोई सिखानेवाला है?"

"मेरे ही गाँव में नहीं, बल्कि आसपास के किसी भी गाँव में ऐसा कोई शायद नहीं है, जो यह मंत्र जानता हो। ऐसे मंत्र बैरागी व सन्यासियों को ही साधारणतया मालूम होते हैं। ऐसी दिव्य शक्ति केवल सन्यासी व बैरागी ही रखते हैं। तुम उनमें से किसी की सहायता प्राप्त कर पाओगे तो तुम्हें साँप की काट का मंत्र-ज्ञान प्राप्त होगा।" रिश्तेदार ने कहा।

उस दिन से परबत बैरागी या सन्यासी की खोज में लग गया, जिससे यह मंत्र सीखने के लिए वह आतुर था।

परबत ने इस साल अपने खेत में ज्वार की फ़सल उगायी। अच्छी फ़सल हुई। भुट्टों से भरा खेत देखने में बहुत ही अच्छा लग रहा था। फ़सल को दिन व रात के पक्षियों से बचाने के लिए उसने खेत में मचान खड़ा किया। रात-दिन वहीं रहकर खेत की रखवाली करने लगा।

एक दिन शाम को उसने देखा कि बैरागियों का एक झुंड उसके खेत के बग़ल से गुज़र रहा है। परबत को लगा कि उसकी इच्छा की पूर्ति का समय निकट आ गया। वह मचान से उतरकर दौडा-दौड़ा उन बैरागियों से मिलने गया। उसने उनमें से एक

दामोदर खत्री

बैरागी को प्रणाम किया, जो हृष्ट-पुष्ट था, जिसकी लंबी काली दाढ़ी थी। उसने बैरागी से अपनी इच्छा प्रकट की। प्रार्थना की कि मुझे सर्प-मंत्र सिखाइये।

बैरागी ने, परबत को ग़ौर से देखा और कहा "सर्प-मंत्र सूर्योदय के समय अथवा मध्याह्न के समय ही सीखना चाहिये। तभी उसका फल मिलता है। अब तो अंधेरा होनेवाला है। यह अनुकूल समय नहीं है। इस रात को अपने खेत में रहने दोगे तो कल प्रातःकाल मंत्र सिखाऊँगा।"

परबत ने खुशी-खुशी अनुमति दे दी। उसने सब बैरागियों का आह्वान किया। वे सब भक्ति-भरे गीत गाते रहे और भुट्टों को तोड़कर खाते रहे। पूरा खेत तितर-बितर कर दिया और जब पेट भर गया तो आराम से सो गये।

अपनी फ़सल को नष्ट होते हुए देखकर भी परबत को दुख नहीं हुआ। उसे इस बात की खुशी थी कि सबेरे सर्प-मंत्र सीखनेवाला हूँ। इस खुशी में वह रात भर जागा ही रहा।

सबेरा होते ही बैरागी नींद से जागे और जाने के लिए तैयार हो गये।

परबत जल्दी-जल्दी उस हट्टे-कट्टे बैरागी के पास गया, उसके पाँवों पर गिरा और चिल्लाता रहा "स्वामी, सर्प-मंत्र, सर्प-मंत्र।"

बैरागी ने नाराज़ होते हुए कहा "जोगी आया, ज्वार खाया, उठोजाव" कहता हुआ परबत के कंधे पर ज़ोर से मार मारी और चलता बना। परबत ने सोचा कि यही सर्प-मंत्र है। उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। उसकी इच्छा पूरी हो गयी। उसे लग रहा था, मानों दुनिया ही उसकी मुट्ठी में आ गयी। बैरागी की बातों को दुहराता हुआ वह घर गया। अपनी पत्नी से कहा कि बैरागी ने उसे सर्प-मंत्र सिखाया। उसकी पत्नी ने गाँव भर में यह समाचार फैलाया।

इस घटना के एक महीने के बाद एक ग्रामीण को साँप ने डसा। उसके रिश्तेदार घबरा रहे थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या किया जाए। अचानक उनमें से एक को परबत की याद आयी। उसने तुरंत कहा "घबराते क्यों हो? हमारा परबत सर्प-मंत्र जानता है। यह मंत्र-विद्या उसने एक महान बैरागी से सीखी। बैरागियों का दिया हुआ वर कभी खाली नहीं जाता। मुझे पूरा विश्वास है कि परबत के मंत्र से यह बच

जायेगा। इसे उसके पास ले चलें।"

वे उसे परबत के पास ले आये। परबत ने मन ही मन मंत्र पढ़ा और उस आदमी के कंधे पर ज़ोर से मारा। वह तक्षण ही उठ बैठा। अब लोगों को पूरा विश्वास हो गया कि बैरागी का मंत्र प्रभावशाली है। परबत ने पहली बार मंत्र का प्रयोग किया। वह डर रहा था कि बैरागी का मंत्र प्रभावशाली है या नहीं। अब उसका डर दूर हो गया। उसे भी विश्वास हो गया कि मंत्र प्रभावशाली है।

तब से गाँव में किसी को साँप ने डसा तो उसे परबत के पास ले आने लगे। मंत्र पढ़ते ही साँप से डसा गया वह आदमी उठ बैठता था। इससे परबत की ख्याति आसपास के गाँवों में भी फैल गयी। वे उसे थोड़ा-बहुत धन भी देने लगे। इससे परबत की आर्थिक स्थिति में तरक्की हुई। असल में यह मंत्र सीखकर धन कमाने का उसका उद्देश्य नहीं था। मंत्र सीखने की उसमें तड़प मात्र थी। किन्तु जब लोग उसके उपकार के एवज़ में धन देने लगे तो उसने सहर्ष स्वीकार किया।

उसने अपने खेत के बगल के चार पाँच एकड़ों की ज़मीन भी खरीद ली। झोंपड़ी की जगह पर उसने अच्छा-खासा घर भी बनवाया। बेटी की शादी भी संपन्न परिवार के युवक से करायी। इस सफलता के बाद भी उसे घमंड छू नहीं गया। अब भी खुद खेती करता और आराम से ज़िन्दगी गुज़ारने लगा।

मोती ने धन कमाने के लिए अपना गाँव छोड़ दिया। बहुत समय तक वह इधर-उधर भटकता रहा। वह परबत का दोस्त था। एक दिन वह अपने दोस्त से मिलने उसके यहाँ आया। परबत की उन्नति देखकर वह बहुत खुश हुआ। दो-तीन हफ़्तों तक दोनों दोस्त अपने बचपन की यादों में खो गये।

लौटते समय मोती ने परबत से कहा ''तुम परोपकार कर रहे हो और धन कमा रहे हो। यह सचमुच ही प्रशंसनीय विषय है। किन्तु अब तक तुमने मुझे बताया ही नहीं कि उस बैरागी ने तुम्हें क्या सर्प-मंत्र सिखाया?''

परबत ने ठठाकर हँसते हुए कहा ''जोगी आया, ज्वार लाया, उठोजाव। बस, यही मंत्र है, जो उसने मुझे सिखाया।''

इसपर मोती ज़ोर से हँस पड़ा और कहा ''क्या यही सर्प-मंत्र है! बैरागी ने तुम्हें एकदम धोखा दिया। तुम्हारे ज्वार की फ़सल का सर्वनाश कर दिया, फिर भी तुम चुपचाप देखते रहे। इसलिए उसने जान लिया कि तुम नादान हो। मेरा पूरा यक़ीन है कि वह बैरागी सर्प-मंत्र नहीं जानता। सर्प-मंत्र सिखाने तुम उसके पाँव पड़े तो वह नाराज़ हो गया होगा। उसने कहा भी कि तुम्हारे भुट्टे खा लिये, अब उठो कहकर उसने तुम्हें गाली दी। उठोजाव का यही मतलब है।''

परबत को मालूम था कि बचपन का दोस्त मोती झूठ नहीं बोलता। अब परबत को लगा कि उसका दोस्त सच ही कह रहा है। इसपर उसे दुख हुआ कि जो मंत्र वह पढ़ रहा है, वह सचमुच सर्प-मंत्र नहीं है, वह सरासर झूठा है।

इस घटना के एक हफ़्ते के बाद साँप से डसा गया एक आदमी उसके पास लाया गया। परबत असमंजस स्थिति में पड़ गया। वह निर्णय नहीं कर पा रहा था कि मंत्र का उपयोग करूँ या नहीं। फिर भी मन ही मन मंत्र पढ़ते हुए उसने उस आदमी के कंधे पर ज़ोर से मारा। किन्तु वह आदमी न हिला न डुला। अब परबत को जानने में देर नहीं लगी कि दोस्त की कही बात सच है। मंत्र पर अब उसका विश्वास उठ गया।

परबत ने फ़ौरन वहाँ उपस्थित लोगों से कहा ''मुझसे एक अपचार हुआ, जिसके कारण सर्प-मंत्र विफल हो गया। इसे तुरंत शहर ले जाइये। वहाँ अच्छे वैद्य हैं।''

अब सबको मालूम हो गया कि परबत ने मंत्र-शक्ति खो दी। ईमानदार परबत ने भविष्य में कभी भी सर्प-मंत्र का उपयोग ही नहीं किया। जो धन कमाया, उसी से तृप्त हुआ और अपना जीवन आराम से बिताने लगा।

सुवर्ण रेखाएँ - १६

१. बुनियाद के बिना स्तंभ?
वेदी पर खड़ा गया यह स्तंभ मंच किसी भी प्रकार से जुडा हुआ नहीं है। नौ सौ साल पहले होयसाल राजा विष्णुवर्धन ने इसका निर्माण किया। इसे 'आकर्षण स्तंभ' के नाम से भी पुकारते हैं।
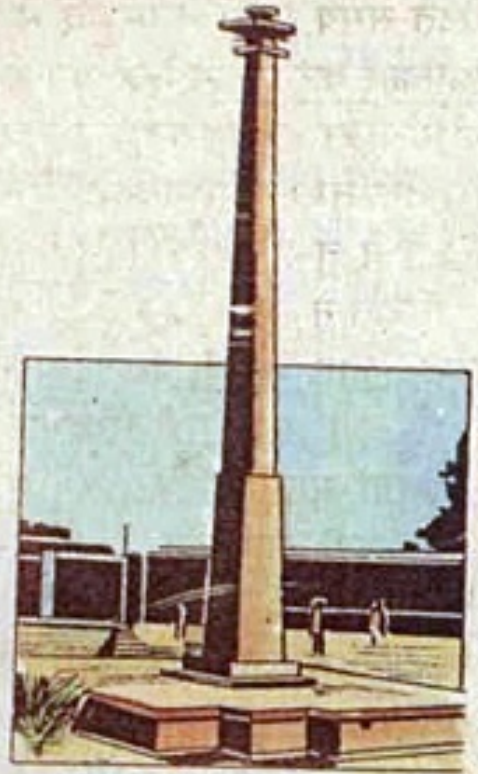
संसार में इन्हें हम कहाँ देख सकते हैं ?

२. संसार का सबसे ऊँचा रेल्वे मार्ग...?
एंडेस पर्वतों पर समुद्री सतह से ४८१६ मीटरों की ऊँचाई पर इस रेल्वे मार्ग में जब सफर करते हैं तब वायुपीडन की कमी के कारण कुछ यात्रियों को प्राणवायु की आवश्यकता पड़ती है। ज़रूरत पड़ने पर यात्रियों की सहायता करने के लिए नर्सों की सेवाएँ उपलब्ध होती हैं।

३. संपूर्ण रूप से पहाड़ी नमक से निर्मित भूगर्भ नगर?
यह भूमि से तीन सौ मीटरों के नीचे स्थित नमकखान के मध्य है। विलक्षण यह नगर खान के मज़दूरों की मेहनत का फल है। खान के मज़दूरों ने यहाँ एक गिरिजाघर, रेल्वेस्टेशन, बालरूम आदि का निर्माण किया। इन सबों को उन्होंने पहाड़ी नमक से ही छेदा है।

जंतु पहेली

मैं कौन हूँ ?
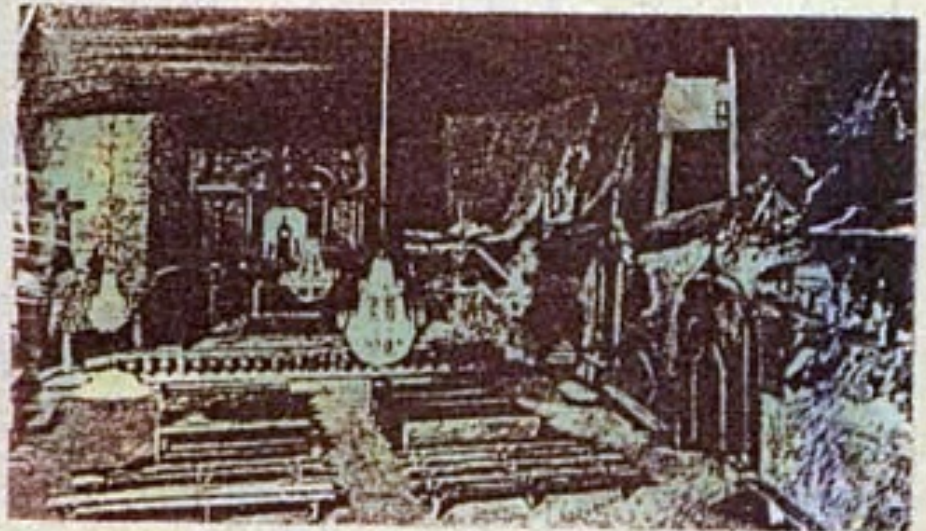
१. मैं नाटे पैरों का पक्षी हूँ। हवा में उड़ नहीं सकता किन्तु पानी में बखूबी तैर सकता हूँ।
२. अनेकों प्रकारों से मनुष्य से मेरा साम्य है।
३. इस भूमि पर रहते हुए सब जंतुओं से सबसे बड़ा जंतु हूँ।
४. मैं वह पक्षी हूँ, जो उड़ नहीं सकता। मेरे देश की प्रजा अक्सर मेरे नाम से पुकारी जाती हैं।

५. पक्षियों में मैं सबसे बड़ा पक्षी हूँ।
६. मेरा बड़ा कूबड़ है। मुझे रेगिस्तान का जहाज़ कहते हैं।
७. मुझे आस्ट्रेलिया का जंगली कुत्ता कहते हैं।

कथा पहेली

गलती हुई

गौरव को मालूम हुआ कि कालेज के छात्रावास में रहनेवाले एक विद्यार्थी के कमरे में भारी रकम है। वह तुरंत अपने घर के ही सामने साइकिल की जो दुकान थी, उससे साइकिल किराये पर ली और तेज़ी से चलाते हुए छात्रावास पहुँचा। साइकिल नीचे रख दी और सीढ़ियों से होते हुए कमरे के पास गया। दरवाज़े पर ताला लगा हुआ था। फिर भी उसे लगा कि ताला तोड़ना कोई मुश्किल काम नहीं है। ताला तोड़कर अंदर गया और रकम ले ली। सीढ़ियों से होते हुए नीचे चला आया। साइकिल पर सवार होकर थोड़ी ही देर में मुख्य सड़क पर पहुँच गया। वह सीटी बजाता हुआ बड़े ही उत्साह से जाने लगा। अचानक उसे महसूस हुआ कि उससे भारी गलती हुई। वहीं रुक गया और फिर छात्रावास की ओर मुड़ा। किन्तु देरी हो चुकी थी। फुटबाल खेलने के बाद लौटे विद्यार्थियों को चोरी का पता चल गया। उन्हें देखते ही वह वहाँ से भाग निकला। उसने जान लिया कि पुलिस जल्दी ही उसे गिरफ़्तार करने उसके घर जायेगी, इसलिए उसने घर जाने का साहस नहीं किया।

क्या बता सकते हैं कि उसने कौन-सा आधार छोड़ दिया, जिसके कारण उसके पकड़े जाने की संभावना है।

शौकीले सवाल

सावधान !

१. क्यों मधुमक्खी न ही उछल सकती है, न ही उड़ सकती है?

२. आस्ट्रेलिया के आदिवासी 'बूमेरांग' को ऐसा फेंक सकते हैं, जिससे वह उन्हीं के पास वापस आता है। मामूली टेन्निस की गेंद से भी यह संभव है। वह कैसे?

३. इस चित्र में एक भूल है। वह क्या है?

४. मेरे मित्र ने एक कागज व पेन्सिल लिया और मुझसे कहा कि मैं बायें हाथ से लिख सकता हूं। मैंने उसे चुनौती दी कि लिखके दिखाओ। उसने लिखकर दिखाया। कैसे?

५. एक हाथी आपकी जेब के रूमाल पर बैठ जाए तो आप क्या करेंगे?

६. एक साल के बाद बछड़ा क्या बनता है?

७. हर कोई एक ही समय पर यह काम करता है। यह काम क्या है?

कीजिये

बिंदियोंवाली दियासलाई की डिबियाँ-कुत्ते की तस्वीर

आवश्यक वस्तु

दो खाली दियासलाई की डिबियाँ। तीन ऐसक्रीम के छोटे-छोटे डंडे : दियासलाई की डिबियों पर चिपकाने के लिए कागज, चाकू, काले रंग का फेल्टपेन, गोंद

तैयार करने की पद्धति

१. दियासलाई की डिबियों पर कागज़ चिपकाइये। ऐसक्रीम के डंडों पर काला रंग पोतिये ।

२. ऐसक्रीम का एक डंडा दियासलाई की डिबिया के अंदरी हिस्से में और दूसरा दियासलाई की डिबिया के बाहरी हिस्से में आये।

३. ऐसक्रीम के दूसरे डंडे को आधा काटिये। पूंछ का हिस्सा, घुटना आगे आये, दियासलाई की डिबिया में घुसाकर रखिये। तीसरे डंडे को फिर से आधा कतरिये और सिर के दोनों तरफ कानों की तरह गोंद से चिपकाइये।

४. आँखों को, हँसते हुए मुँह को, शरीर को बिंदियों से अपने कुत्ते को सजाइये।

तस्वीर बनाएँ

अंक 5 को नाराज़ पक्षी के रूप में कैसे बदल सकते हैं

यहाँ देखिये

अंक 6

रोते हुए शिशु की तरह

सुवर्ण रेखाएँ - १५ के उत्तर

संसार में कहाँ ?

१. दक्षिण अमेरीका का गौटयाला २. असम का जतींगा
३. टर्की का इस्तानबुल

चित्र - पहेली

१.आक्टोवस २. षार्क ३.स्टार मछली ४. डाल्फिन ५. समुद्री कच्छप ६. जेह्ली मछली

कथा - पहेली

बाहर से खिड़की की शीशियाँ अगर तोड़ी गयीं तो शीशियों के टुकड़े घर के अंदर ही गिरते। शीशियों के टुकड़े बाहर के बगीचे में गिरे पड़े हैं, इसलिए शीशियाँ अंदर से ही तोड़ी गयी होंगीं। जब चोरी हुई, तब घर में घर का रखवाला मात्र मौजूद था, इसलिए साबित हो गया कि वही चोर है।

शौकीले सवाल

१. 'अ' कप में शकर का एक क्यूब 'आ' कप में दो क्यूब 'इ' कप में तीन क्यूब्स डालिये। इसके बाद 'इ' कप को 'आ' कप में रखिये। अब हर कप में विषम संख्या के क्यूब्स ही हैं।

२. आपकी माँ ३. कोयला ४. जब एक ही बंदर पिंजडे में जाता है तब तो वह खाली नहीं होगा। ५. क्योंकि वे चल नहीं सकते। ६. घडी, जो रुक गयी।
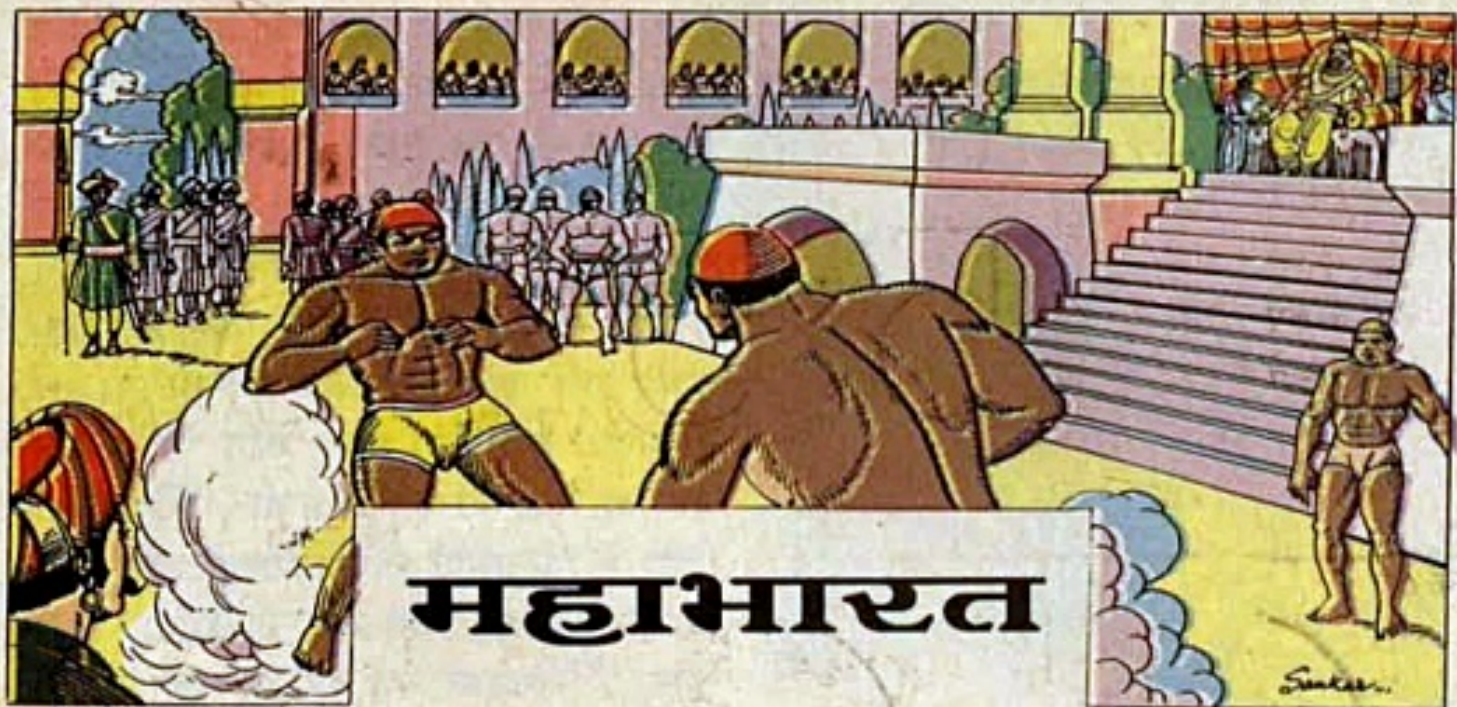
पांडव द्रौपदी सहित रहस्यपूर्वक अपना अज्ञातवास बिता रहे थे। चौपड़ के खेल में धर्मराज जीतता था और जो धन उसे प्राप्त होता था, अपने भाइयों में बाँटता था। भीम अपने पकाये रुचिकर पदार्थों को उन्हें देता था। अंतःपुर में जो पुराने कपड़े अर्जुन को दिये जाते थे, उन्हें भाइयों और द्रौपदी को देता था। अश्व-पोषण पर खुश होकर राजा जो पुरस्कार नकुल को देते थे, उन्हें वह और भाइयों में बाँटता था। सहदेव दूध और दही भाइयों तक पहुँचाता था। द्रौपदी अपनी असलियत का राज़ छिपाती हुई बड़ी ही सतर्कता के साथ व्यवहार करती थी। सबको इस बात का भय था कि थोड़ी भी असवधानी बरती जाए तो दुर्योधन को पता चल जायेगा।

यों चार महीने बीत गये। तब मत्स्य देश में ब्रह्मोत्सव हुए। इस उत्सव में भाग लेने के लिए अनेकों देशों से कितने ही लोग आये। विराटराजा को मल्लयुद्ध का अच्छा ज्ञान था। इसलिए उसने मल्ल-योद्धाओं के रहने का अच्छा प्रबंध किया, उनके लिए आवश्यक सुविधाएँ प्रदान की और उनके युद्धों को देखते हुए मज़ा लूटा।

वहाँ आये मल्ल-योद्धाओं में जीमूत नामक मल्ल-योद्धा बड़ा ही बलशाली था। उसने सभी मल्लयोद्धाओं को अपने साथ लड़ने के लिए ललकारा। किन्तु कोई भी मल्लयोद्धा उससे भिड़ने तैयार नहीं था। सब के सब डर गये। इसलिए विराट राजा ने अपने रसोइये भीम को उससे लड़ने का आदेश दिया। भीम उससे जूझने तैयार हो गया।

भीम और जीमूत दो मस्त हाथियों की तरह मल्लयुद्ध करने लगे। अति भयंकर उनके युद्ध को देखकर प्रजा हर्षित हुई। भीम ने जीमूत को उठाया और बड़े ही वेग से उसे चारों तरफ़ घुमाने लगा, जिसे देखकर बाक़ी

कीचक की विश्रृंखलता - ३९

विराटराजा का साला था, राज्य का सेनाधिपति था। उसने जब सुदेष्णा के यहाँ द्रौपदी को देखा तब वह उसे देखता ही रह गया। उसकी सुँदरता ने उसे अंधा बना दिया। वह अपने आप पर काबू पा न सका। उसने अपनी बहन सुदेष्णा से कहा "मैंने इसके पहले इसे यहाँ कभी नहीं देखा। इसकी सुँदरता ने मुझे सम्मोहित कर दिया। यह कौन है? अप्सरा जैसी यह सुँदर स्त्री कहाँ से आयी? ऐसी अद्भुत सुँदरी से परिचर्याएँ क्यों करा रही हो? अगर यह मेरे घर आ जाए तो इसे पूजूँगा, सुखी रखूँगा।" कहकर वह वहाँ से चला गया। किन्तु द्रौपदी से मिलने के उसके प्रयत्न ज़ारी रहे। एक दिन एकांत में द्रौपदी से मिला भी और अपनी इच्छा अभिव्यक्त की।

द्रौपदी ने उससे कहा "मुझसे यों बातें करना सही नहीं। मैं किसी की पत्नी हूँ। तुम्हारी यह इच्छा तुम्हारे लिए हानिकारक सिद्ध होगी।"

"मुझे यों दुतकारो मत। बाद तुम्हीं पछताओगी। इस राजा और राज्य का मैं ही आधार हूँ। साधन-संपत्तियों, भोग-भाग्यों, रूप व यौवन में मुझसे बढ़कर इस लोक में कोई और है ही नहीं। मुझे अपनाओ, अपना दास बनाओ और आनंद लूटो। व्यर्थ क्यों दूसरों की सेवाओं में रत होकर अपने जीवन के साथ अन्याय करती हो?" कीचक ने कहा।

द्रौपदी ने क्रोधित होते हुए कहा "मेरे मोह से अपने को नहीं छुड़ावोगे तो समझ लो कि तुम्हारे सिर पर मौत मंडरा रही है। मेरे पाँच गंधर्व पति सदा मेरी रखवाली करते रहते हैं। उनका ध्यान सदा मुझपर ही केंद्रित

मल्लयोद्धा आश्चर्य में डूब गये। भीम जीमूत को यों बहुत देर तक घुमाता रहा और आखिर ज़मीन पर पटक दिया। वह वहीं का वहीं मर गया। विराटराजा ने भीम को अनगिनत पुरस्कार दिये।

अर्जुन अंतःपुर की स्त्रीयों से गवाता था, नचाता था और राजा को खुश करता था। नकुल ने घमड़ी घोड़ों को अपने वश में करके राजा से बहुत-सी भेंटें पायीं। उसी तरह मदमस्त साँडों को पालतू पशु बना देता सहदेव। फलस्वरूप उसे भी काफी भेंटें प्राप्त हुई। अपने पतियों के इन कार्यों व कष्टों को देखकर द्रौपदी का दिल बहुत दुखता था।

इस प्रकार पांडवों का अज्ञातवास - काल समाप्त होने आया। ऐसे समय पर सिंहबल नामक कीचक ने द्रौपदी को देखा। यह कीचक

रहता है। उनको जब यह बात मालूम हो जायेगी, तब तुम्हें कोई बचा नहीं सकेगा। उनके हाथों तुम्हारी मृत्यु निश्चित है।''

द्रौपदी की इस चेतावनी से भी कीचक थोड़ा भी नहीं घबराया। वह निराश नहीं हुआ। उसका मोह दिन ब दिन बढ़ता ही गया। वह बहन सुदेष्णा के पास गया और उससे कहा ''किसी भी हालत में, किसी भी क़ीमत पर सैरंध्री मेरी होनी चाहिये। नहीं तो मैं जीवित नहीं रहूँगा। मैंने अनेकों प्रकार उसे समझाया-बुझाया, गिड़गिड़ाया, प्रार्थना की, पर उसका मन मेरी तरफ़ झुक नहीं रहा है। मुझे अपनाने के लिए वह तैयार नहीं हो रही है।'' सुदेष्णा ने भाई करते हुए कहा ''सैरंध्री मेरे आश्रय में है। मैंने उसकी रक्षा का वादा किया। पहले ही वह मुझे बता चुकी कि उसके पाँच गंधर्व पति हैं। तुम सगे भाई हो, इसलिए यह रहस्य तुम्हें बता रही हूँ। सैरंध्री को अपना मन लुटाकर अपनी जान को संकट में मत डालो।''

''हज़ार गंधर्व भी मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। पतिव्रता स्त्रीयाँ भी मेरी सुंदरता पर रीझती हैं, मुझपर मरती हैं। वह दिन जल्दी ही आयेगा, जब कि मेरे वैभव को देखकर सैरंध्री मुझे चाहने लगेगी, मेरे संग रहने के लिए तड़पने लगेगी। किसी तरह उसे मेरी बनाओ और मुझे बचावो।'' कीचक गिड़गिड़ाने लगा।

''अरे पापी, एक तो तुम ग़लत काम कर रहे हो, तिसपर मुझे भी उस नीच कार्य में फँसाना चाहते हो, मुझे साधन बनाना चाहते हो? तुम्हारा पाप तुम्हीं तक सीमित नहीं होगा, सारे कुल का नाश कर बैठेगा। अब तुम घर जाओ। सुरा और मधुर अन्न तैयार रखो। उन्हें लाने सैरंध्री को तुम्हारे यहाँ भेजूंगी। मालूम नहीं, उसे तुम अपने वश में कैसे कर पाओगे।'' सुदेष्णा ने कहा।

कीचक तुरंत अपने भवन में लौटा और रुचिकर पकवान और पेय तैयार करवाये। द्रौपदी की प्रतीक्षा करने लगा।

तदुपरांत सुदेष्णा ने द्रौपदी से कहा ''सैरंध्री, मुझे बड़ी प्यास लगी है। तुम कीचक के घर जाओ और पीने के लिए कुछ ले आओ।'' ''देवी, मैं उसके घर नहीं जा सकूँगी। आपको अच्छी तरह से मालूम है कि मोह के आवेश में वह अंधा हो गया। अगर मैं वहाँ जाऊँगी तो अवश्य ही वह मेरा अपमान करेगा। आपके पास कितनी ही और परिचारिकाएँ हैं, उनमें से किसी को भेजिये''

द्रौपदी ने कहा।

"सुरा लाने के लिए जब मैं ही तुम्हें खुद भेज रही हूँ तो क्या वह तुम्हें छूने का साहस करेगा?" कहती हुई सुदेष्णा ने, द्रौपदी को सोने का एक बरतन दिया।

रानी की आज्ञा के पालन के सिवा कोई और चारा नहीं था, इसलिए द्रौपदी उस बरतन को लेकर कीचक के घर गयी। उसे देखते ही कीचक आनंद से उछल पड़ा और कहा "सुंदरी, तुम्हारा स्वागत है। तुम मेरे प्राण हो। मेरा सौभाग्य है कि तुम मेरे यहाँ पधारी। मेरी इच्छा पूरी करो। दिव्य वस्त्र पहनो, हीरे-जवाहरातों से अपना अलंकार करो। मेरे साथ मदिरा पीओ, आनंद लूटो, सुखी रहो।"

"रानी ने सुरा ले आने मुझे यहाँ भेजा। वे बहुत ही प्यासी हैं। तुरंत सुरा दिलवायेंगे तो लेकर चली जाऊँगी।" द्रौपदी ने कहा।

"सुरा किसी और के हाथों भिजवा दूँगा।" कहते हुए कीचक ने उसका हाथ पकड़ लिया। द्रौपदी घबरा गयी। उसने कीचक को धक्का देकर नीचे गिराया और दौड़ती हुई विराट राजा की सभा में प्रवेश किया। कीचक उसके पीछे-पीछे ही आया और उसके केशों को पकड़कर रोक दिया। विराटराजा यह सब कुछ देख रहा था।

धर्मराज व भीम की आँखों के सामने यह अन्याय और अत्याचार हुआ। भीम उसी क्षण कीचक को मार डालना चाहता था। वह क्रोध-भरित होकर दांत पीसता रहा, उसका सारा शरीर पसीने से भीग गया, आँखों से अग्नि-ज्वालाएँ प्रज्वलित होने लगीं। वह अपने को काबू में रख नहीं पाया। सामने दिखायी पड़नेवाले पेड़ को उखाड़ने के उद्देश्य से वह अपनी जगह से हिला।

धर्मराज ने, भीम के पाँव के अंगूठे को अपने अंगूठे से दबाते हुए कहा "अरे, क्या करने जा रहे हो? लकड़ियों के लिए इस पेड़ को क्यों गिराना चाहते हो? दूर और बहुत-से पेड़ हैं। गिराना हो तो उन्हें क्यों नहीं गिराते।"

द्रौपदी अपने पतियों की अशक्तता ताड़ गयी और आग बरसानेवाली आँखों से राजा विराट को देखती हुई बोली "यह नीच मेरा अपमान कर रहा है और महाबली मेरे गंधर्व पति वचन-बद्ध व काल-बद्ध होने के कारण मेरी रक्षा करने की स्थिति में नहीं हैं। ऐसी स्थिति में राजा होकर भी आप क्या मेरी रक्षा नहीं कर सकते? अपना राज-धर्म निभा

नहीं सकते? आपको तो चाहिये कि मेरा शील लुटने से मुझे बचाएँ। किन्तु आप चुप हैं। अपना राज-धर्म भूलकर आप निश्चिंत बैठे हैं। इस अत्याचारी का अंत क्यों नहीं करते?'' फिर उसने सभा में उपस्थित लोगों से कहा ''लगता है कि राजा और कीचक की तरह आप भी अपना धर्म भूल गये।''

तब राजा विराट ने कहा ''देवी, मैं नहीं जानता हूँ कि आप दोनों के बीच में किस बात को लेकर विवाद उठ खड़ा हुआ। बिना जाने मैं अपना धर्म-निर्णय कैसे सुना सकता हूँ।'' तब धर्मराज ने द्रौपदी से कहा ''यहाँ चिल्लाना व्यर्थ है। अच्छा इसी में है कि आप अंत:पुर चली जाएँ। आपके पति आपकी रक्षा नहीं कर पा रहे हैं, इसका अवश्य कोई सबल कारण होगा। देश और काल को भुलाकर, सोचे-विचारे बिना यहाँ शोक करती रहोगी तो क्या लाभ। राजसभा में चिल्लाती रहोगी तो क्या प्रयोजन। तुम्हारे साथ जिसने अन्याय किया, जिसने तुमपर अत्याचार किया, जिसने तुम्हें अपमानित किया, उसे तुम्हारे पति ही अवश्य दंड देंगे। अब यहाँ से चली जाओ।''

द्रौपदी, सुदेष्णा के कक्ष में लौट आयी। केशों को फैलाकर शोकदेवी की तरह गुमसुम बैठी रही।

द्रौपदी ने मन ही मन कीचक का वध करवाने का निर्णय ले लिया। आधी रात को भीम के यहाँ गयी। भीम करवटें बदल रहा था। उसके मुख पर क्रोध की ज्वाला भड़क रही थी। वह उसके पास गयी और उसे जगाते हुए कहा ''मरे हुए मानव के शव की तरह क्यों यों चेतनाहीन पड़े हुए हो। जीवित कोई भी मानव अपनी पत्नी का अपमॉन अपनी ही आँखों के सामने होते हुए देखकर भी हाथ पर हाथ धरे बैठेगा? भरी सभा में हुए पत्नी का अपमान चुपचाप देखता रह जायेगा? उठो, उठो।''

भीम उठकर बैठ गया। कहा ''क्यों तुम्हारा चेहरा इतना उतरा हुआ है? यहाँ क्यों आयी? मुझसे कोई काम हो सकता हो तो बताओ, करूँगा।''

''सब जानते हो, फिर भी ऐसी बातें क्यों कर रहे हो? तुम्हारे जुवारे भाई के कारण मुझे इतने कष्ट झेलने पड़ रहे हैं। एक तो मैं रानी सुदेष्णा के यहाँ परिचारिका हूँ, तिसपर उसका भाई कीचक मेरे पीछे पड़ा हुआ है। उसने मेरा घोर अपमान किया। परिचर्याएँ करते-करते मेरे हाथ किस प्रकार घिस गये, छिल गये, तुम

खुद देख लो'' कहकर द्रौपदी ने भीम को अपने हाथ दिखाये।

भीम ने उससे कहा ''उस दुष्ट कीचक ने जब तुम्हें भरी सभा में लात मारी, तभी, उसी क्षण मैं उसका खून पी जाना चाहता था। किन्तु धर्मराज ने मुझे रोका। उसी दिन दुर्योधन, कर्ण, शकुनि, दुःश्शासन के सिर फोड़ देता तो कितना अच्छा होता। थोड़े और दिन सहनशक्ति से काम लो। तुम अवश्य ही महारानी बनोगी।''

''मुझसे यह दुख सहा नहीं जा रहा है। यह झूठ है कि मैं फिर से रानी बनूँगी। इन शुष्क बातों से क्या लाभ? पहले सोचो कि इस अपमान के प्रतीकार का मार्ग क्या है? विराट की आँख भी मुझी पर लगी है क्योंकि मैं सुदेष्णा से सुंदर हूँ। यह जानकर ही कीचक मेरे पीछे पड़ गया। मैंने अपने को बचाने के लिए उनसे कहा भी था कि मेरे पाँच गंधर्व पति हैं, जो हर स्थिति में मेरी रक्षा करेंगे, किसी ने मेरी ओर आँख उठाकर देखा तो वे उसकी आँख निकाल देंगे। पर कीचक ने मेरी बातों की परवाह नहीं की। उसकी बहन सुदेष्णा ने सुरा ले आने के बहाने मुझे उसके घर भेजा। वहाँ उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। उससे बचकर दौड़ती हुई गयी और राजसभा में प्रवेश किया। सबके सामने उस नीच ने मुझे लात मारी। उस पापी, नीच दुष्ट को नहीं मार डालोगे तो मैं विष खाकर मर जाऊँगी।'' भीम के गले लगकर, विलाप करती हुई द्रौपदी ने कहा।

भीम ने उसके आँसुओं को पोंछते हुए कहा ''तुम्हारे कहे अनुसार ही मैं उसे मार डालूँगा। किन्तु तुम्हें एक काम करना होगा। अपने इस रोते हुए, शोक से भरे हुए चेहरे को लेकर नहीं, हँसती, आनंद में झूमती हुई, मुस्कान-भरे चेहरे को लेकर कीचक के पास जाओ और ऐसा अभिनय करो, मानों तुम उसकी इच्छा पूर्ण करने के लिए सन्नद्ध हो। स्त्रीयाँ नर्तनशाला में दिन में नृत्य का अभ्यास करती हैं। रात के समय वहाँ कोई नहीं रहते। उससे कहो कि वह रात को वहाँ आये। मैं वहाँ उसका काम तमाम कर दूँगा। उसे अपने बाहु-बंधन में बाँधकर उसकी हड्डियाँ तोड़ दूँगा। मुँह से आवाज़ भी निकाल नहीं पायेगा। किसी दूसरे को इसकी ख़बर भी नहीं होगी।'' भीम के इन वाक्यों ने द्रौपदी को शांत किया।

बच्चों की दुनिया

छठवें साल में ड्रैविंग

यह सर्वसाधारण विषय है कि बच्चे मोटरकार के स्टीरिंग के पास, बोनेट पर बैठते हैं और फोटो खिंचवाने के लिए उत्सुक रहते हैं। लेकिन आपने आज तक क्या कभी देखा कि छे साल का एक बच्चा स्टीरिंग पकड़े मोटरकार चला रहा है? वानगर का छे साल का बालक सदाशिव मारुती 'आम्नी' मोटरकार चला रहा है। पिछले जनवरी से वह यह अद्भुत काम कर रहा है। इस किशोर के पिता हैं मुरली और माता हैं पद्मावती। वानगर के श्री आदित्य मेट्रिक्युलेशन स्कूल में सदाशिव पहली कक्षा में पढ़ रहा है। यह यु.के.जी में प्रथम आया है। वक्तृत्व स्पर्धा में भी यह प्रथम आया।

नौ साल की उम्र में मेट्रिक

नौवें साल की उम्र में ही सी.बि.एस.ए. (सेंट्रल बोर्ड आफ सेकेंडरी एज्युकेशन) की दसवीं कक्षा में उत्तीर्ण होना आश्चर्यजनक बात है। पिछले मई महीने में दिल्ली के तथागत अवतार तुलसी ने इस नये रिकार्ड की सृष्टि की। यह उससे कैसे संभव हो पाया? और सभी बच्चों की तरह वह नर्सरी में भर्ती नहीं हुआ। सीधे वह तीसरी कक्षा में भर्ती हुआ। यही नहीं, उसने उसी साल चौथी और पाँचवी कक्षाओं का पाठ्यक्रम भी पढ़ लिया और उत्तीर्ण हुआ।

इसलिए दूसरे साल वह छठवीं कक्षा में भर्ती हुआ। १९९५ में दिल्ली की एक सार्वजनिक पाठशाला में सातवीं कक्षा में भर्ती हुआ। १९९६-९७ की अवधि में आठवीं कक्षा में विद्याध्यन किया। इसी अवधि में उसने नौ व दस की कक्षाओं के पाठ्यक्रम को भी बखूबी पढ़ लिया। फिर उसने सार्वजनिक परीक्षा लिखने की अनुमति माँगी। इसके लिए आवश्यक व निर्धारित उम्र उसकी नहीं थी। इसलिए सी.बि.एस.ए ने उसके आवेदन-पत्र को अस्वीकार कर दिया। उसके पिता ने अदालत में मुकद्दमा दायर किया। अदालत ने फ़रवरी २६ को फैसला दिया और सी.बि.एस.ए को आदेश दिया कि तुलसी को प्रवेश-पत्र दिया जाए। दुनिया भर में मेट्रिक उत्तीर्ण सबसे छोटी उम्र का बालक है तुलसी। इस बाल मेधावी ने यों नये रिकार्ड की सृष्टि की।

रिकार्ड तोड़ा

आपने देखा होगा कि सर्कस में उल्टे लेटे हुए पहलवान पर से मोटरकार अथवा जीप चलाया जाता है। तीन सालों के पहले बिहार के धनबाद के पंद्रह साल की सुमीता सिंग पर १,५५० कि. ग्रा. के वज़न की मोटर-गाड़ी चलायी गयी। पिछले अप्रैल में ३,२०० कि.ग्रा के वज़न का ट्रक उस युवती के पेट पर से चलाया गया। यों उसने दुनिया का रिकार्ड तोड़ दिया। बिजली के बल्बों को फोड़कर, उनके टुकड़ों को निगल जाना सुमीता के लिए बायें हाथ का खेल है। हाल ही में उसके पेट पर १,००० कि. ग्राम के वजन का पथ्थर रखा गया और पाँच कि. ग्राम के वज़न के हथौड़े से उस पथ्थर के टुकड़े-टुकड़े किये गये।

श्रावण बेलगोला

कर्नाटक राज्य के बेंगलोर के समीप ही श्रावण बेलगाला नामक एक छोटा-सा शहर है। यहाँ 'इंद्रादि' नामक पर्वत पर गोमठेश्वर के नाम से प्रख्यात भव्य बाहुबलि की मूर्ति है। (यह सत्रह फुट की ऊँची एकशिला मूर्ति है।)

यहाँ बारह वर्षों में एक बार 'महामस्त काभिषेक' नामक उत्सव बहुत बड़े पैमाने पर संपन्न होता है। इस उत्सव में भाग लेने के लिए देश के कोने-कोने से हज़ारों लोग आते हैं। वे गोमठेश्वर की पूजा में भक्तिपूर्वक भाग लेते हैं। विशेष रूप से बनायी गयी ऊँची-ऊँची वेदिकाओं पर खड़े होकर पुजारी बड़े बड़े कलशों से दूध, दही, शहद, नारियल का पानी, हल्दी का पानी आदि पुण्य जलों से गोमठेश्वर की मूर्ति के मस्तक का अभिषेक करते हैं। उन जलों में सोने और चाँदी के सिक्के भी होते हैं।

चामुंडरायुड्डु, राचमल्लुराज के आस्थान में सर्वसेनाधिपति थे। इन्होंने ही ई.स. ९८१ में इस एकशिला मूर्ति की प्रतिष्ठापना की। उस दिन से लेकर यह मूर्ति लाखों यात्रियों को आकर्षित करती आ रही है।

पुराणकाल के राजा :

हरितस्व

हरितस्व बहुत ही बडे संगीत-प्रिय राजा थे। स्वयं ही अद्भुत गायक थे। उनके आस्थान में संगीत-विद्वानों तथा गायकों का आदर होता था। वे उन्हें बहुत ही प्रोत्साहित करते थे, किन्तु उनमें से कोई भी संगीत में उनकी बराबरी नहीं कर सका; उनसे आगे बढ़ नहीं सका।

हरितस्व ने नारद के सम्मुख गाया और उनकी प्रशंसा प्राप्त की। सरस्वती-ब्रह्मा को संगीत सुनाकर उनके आशीर्वाद पाये। उनकी कीर्ति वैकुंठ तक व्याप्त हुई। महाविष्णु ने उन्हें बुलवाया और संगीत सुनाने के लिए कहा। हरितस्व का अमृतगान सुनकर विष्णु अपने आप को भूल गये और उस संगीत-सुधा में बहकर सो गये।

एक बार संगीत के आद्य परमशिव का गान सुनने का सौभाग्य हरितस्व को प्राप्त हुआ। शिव ने शंकराभरण राग का आलाप किया। हरितस्व ने एकाग्रचित्त होकर उसे सुना। जब उस राग के बारे में उनका अभिप्राय पूछा गया तो उन्होंने कहा "गायक के स्वर में राग के योग्य भाव नहीं है। शंकराभरण राग का आलापन शांत चित्त से होना चाहिये।" शिव जब आलाप रहे थे, तब वे शांत नहीं थे।

उस राग को आलापते समय शिव हरितस्व के संगीत-सामर्थ्य पर सोच रहे थे। उनका ध्यान बंटा हुआ था। इस कारण स्वर में भाव का लोप हुआ। हरितस्व की व्याख्या पर शिव क्रोधित हो उठे। उन्होंने अपना तृतीय नेत्र खोला। वह दूसरे को भस्म करने की शक्ति रखता है।

फिर भी हरितस्व ने निर्भीकता से कहा "महादेव, भूल, भूल ही होती है। मैं भस्म भी हो जाऊँ, मेरी व्याख्या में कोई परिवर्तन नहीं।" परमशिव की परीक्षा में हरितस्व उत्तीर्ण हो गये। वे असमान गायक व समालोचक ही नहीं, बल्कि अपूर्व धैर्यवान के नाम से सुविख्यात हुए।

उनके धैर्य से संतुष्ट होकर परमशिव ने उन्हें अनूठे वर दिये। उन्हीं वरों के बल पर देवेंद्र जैसे सर्वश्रेष्ठ देवता को भी बंदी करनेवाले अंधकासुर नाम के अति भयंकर राक्षस को उन्होंने मार डाला।

क्या तुम जानते हो?

जाज

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अमेरीका के दक्षिणी राज्यों में प्रारंभ हुआ संगीत है जाज । एक गति में इसे संगीतकार शुरू करते हैं । फिर अलग-अलग गतियों में यह गाया जाता है । आख़िर पुनः पहली गति में ही गान करते हैं । पता नहीं, यह संगीत कैसे शुरू हुआ? १९२० वाँ काल इस संगीत का स्वर्णयुग कहा जा सकता है । अमेरीका के सभी क्षेत्रों के लोगों ने इस संगीत को पसंद किया । बच्चों से लेकर बड़ों तक इसके प्रवाह में बह गये । इसकी अभिवृद्धि के लिए जिन्होंने अधिकाधिक प्रयास किये, उनमें से प्रमुख हैं - लूयिस आर्मस्ट्रांग, बेन्नी गुड्मन, डिज्ज़ी गिलपै, ग्लेल मिल्लर आदि हैं । इन्होंने जाज संगीत में प्रसिद्धि पायी ।

इंद्रधनुष

सर्वप्रथम अंतरिक्षगामी

यह जानकर हमें आश्चर्य होगा कि सर्वप्रथम अंतरिक्षगामी 'लैका' नामक एक कुत्ता था। परंतु यह सच है। १९५७, नवंबर तीसरी तारीख़ को रूसी व्योम नौका स्पुटनिक II में 'लैका' अंतरिक्ष में भेजा गया। जहाँ वह रहा, उस जगह को वातानुकूलित बनाया। उसके लिए आवश्यक भोजन का प्रबंध भी वहीं किया गया। अंतरिक्ष में कुत्ते की गति-विधियों का विवरण स्पुटनिक II में आयोजित साधनों ने रिकार्ड किया। विज्ञानवेत्ताओं ने यों तत्संबंधी विवरण जाने। उन दिनों मालूम नहीं था कि अंतरिक्ष में प्रयोग में लायी गयी व्योमनौका फिर में कैसे भूमि पर लायी जाए। इसलिए 'लैका' अंतरिक्ष में ही मर गया।

स्वतंत्रता की स्वर्णजयंती के शुभ अवसर पर

प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम

१६०० वाँ वर्ष। इंग्लैंड के इतिहास का उज्वल काल। देश छोटा था, पर बड़े-बड़े सपने देखने लगा।

तब प्रथम एलिजबत रानी शासन चला रही थीं। सुप्रसिद्ध नाटककार षेक्सपियर ने अपने नाटकों के प्रदर्शन का प्रारंभ किया। नाविक सर वाल्टर र्‌योली आलू और तंबाकू को तभी अमेरिका से स्वदेश ले आये। सर फ्रान्सिस बेकन बिल्कुल ही नयी शैली में गद्य में लिखने लगे। इस प्रकार अनेकों प्रमुख व्यक्ति अपने-अपने क्षेत्रों में विशिष्ट सेवाएँ व परिश्रम करने लगे।

इस शताब्दी के आख़िरी दिन एलिजबत रानी ने एक पत्र पर हस्ताक्षर किया, जिसके अनुसार उन्होंने ईस्ट इंडिया कंपनी के कुछ व्यापारियों को दूर-दूर के एशिया के देशों में अपनी वस्तुओं को बेचने की अनुमति दी। उस कंपनी का प्रतिनिधि सर थामस रो हमारे देश के मुगल बादशाह जहाँगीर के दरबार में लगातार तीन साल रहा। बादशाह उसके गुण-विशेषों से प्रभावित हुए। उसके प्रति उनके हृदय में आदर-भाव जगा। फलस्वरूप उन्होंने उसे भारत में व्यापार चलाने की अनुमति दी। यह व्यापार सूरत में प्रारंभ हुआ और त्वरित गति से देश के अन्य प्रांतों में व्याप्त हुआ।

क्रमश: कंपनी की आशाएँ अधिक होती गयीं। केवल क्रयविक्रय तक ही अपने कार्यकलापों को सीमित नहीं रख सकी। मुगल बादशाह कमज़ोर होते गये। छोटे-छोटे राजा जम जाने लगे। उनमें परस्पर कलह होने लगे; स्पर्धा की भावना अधिक होती गयी। इस परिस्थिति को कंपनी ने चालाकी से अपने अनुकूल बनाया। कंपनी ने सुव्यवस्थित एक नयी सेना का प्रबंध कर लिया। एक राजा को दूसरे राजा से लड़ाया; उनमें बदले की भावना को प्रोत्साहन दिया। उन दोनों राजाओं में से एक राजा की सहायता की और प्रतिफल के रूप में उससे राज्य के एक हिस्से को अपना बनाने लगी।

एक सौ पचास सालों में कंपनी राजाओं से भी अधिक बलवान शक्ति के रूप में परिणत हुई। तरह-तरह के बहानों की आड़ में मीठी-मीठी बातें करके अथवा डरा -धमकाकर उनके राज्यों को निगलने लगी। इस प्रकार ब्रिटिश इंडिया साम्राज्य की स्थापना हुई। हाथ जोड़कर, सिर झुकाकर इस देश में व्यापार करने आये व्यापारी थोड़े ही समय में उनकी शरण में आये राजाओं के मुकुटों का अपहरण करने लगे; धीरे-धीरे उनके राज्यों को अपना बनाने लगे। व्यापारी शासक बन गये।

भारत देश में उनके आने के दो सौ पचास साल बाद, जनता में उनके प्रति हेय-भावना व असंतुष्टि चरमसीमा पर पहुँची। वह विद्रोह के रूप में उभरी। चूँकि उस विद्रोह में सैनिकों ने अधिक संख्या में भाग लिया था इसलिए ब्रिटिश शासकों ने उसे नाम दिया - गदर (सैनिक विद्रोह)। परंतु सच कहा जाए तो वह केवल सैनिक विद्रोह मात्र नहीं था। जिनकी आकांक्षा ब्रिटिश साम्राज्य का अंत करने की थी, उन्होंने ही यह विद्रोह किया। सब प्रकार से यही कहना समुचित है कि यही प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम था।

अस्त होते हुए सूर्य की किरणें भागीरथी नदी के जल पर गिर रही हैं। नदी-जल सुवर्ण रंग में चमक रहा है। नदी-तट पर अठारह साल का एक युवक सात साल की एक बालिका को तलवार चलाना सिखा रहा है। हज़ारों की संख्या में प्रजा बिना पलक मारे एकटक आश्चर्य और आनंद-भरे नेत्रों से उन्हें निहार रही है। वह युवक विद्युत वेग से अपनी तलवार चलाने में माहिर है। पर आश्चर्य तो सबको इस बात पर है कि वह बालिका विद्युत लता की तरह उछलती हुई तलवार को बड़ी ही सुगमता से घुमा रही है। लगता है, मानो उसके हाथ में पैनीधार तलवार नहीं, बल्कि एक गुड़िया है। उसके इस लाघव्य ने, फुर्ती ने वहाँ उपस्थित सभी को आश्चर्य में डुबो दिया।

झान्सी का राजपुरोहित, अतिथि बनकर चित्तौर आया था। उसने पेशवा बाजीराव से पूछा, ''राजकुमार से तलवार का खेल खेलनेवाली वह बालिका कौन है ?''

''मोरोपंत की लाडली है मनुबाई। युवराज उसे सगी बहन मानते हैं और उसे रोज राजोचित युद्ध-विद्याएँ सिखा रहे हैं। यद्यपि वह बालिका है किन्तु उससे बातें करने पर लगेगा कि मानों वह अनुभवी वृद्धा है। अब रही उसकी व्यवहार-शैली। महरानी की तरह व्यवहार करती है''। मंत्री ने कहा।

''हाँ, उसमें महारानी बनने की योग्यताएँ हैं।'' पुराहित ने कहा।

छत्रपति शिवाजी ने मुगलों के छक्के छुड़ा दिये। उनकी होशियारी, वीरता व आक्रमणों से मुगल साम्राज्य थर्रा उठा। उन्हीं के आस्थान में पेशवा याने प्रधान मंत्री के वंशज के ही थे-द्वितीय बाजीराव। शिवाजी के बाद उन्होने ही पेशवा के अधिकार संभाले। उनके वारिस और राजवंशजों ने अधिकारों

का निर्वहण किया। किन्तु ईस्ट इंडिया कंपनी तरह-तरह के उपायों व षड्‌यंत्रों से उनके राज्याधिकारों को छीनने और हस्तगत करने के प्रयत्नों में जुट गयी। आख़िर द्वितीय बाजीराव के सर्वाधिकार छीन लिये गये और उन्हें कंपनी प्रदत्त भरण से ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ी।

पेशवा की संतान नहीं थी। अपने आस्थान के एक कर्मचारी के पुत्र माधवराव की अक़्लमंदी व बरताव से वे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने उसे अपने वारिस के रूप में गोद लिया। १८२७ में एक दिन प्रातःकाल वह बालक पेशवा का वारिस बना। वही बड़ा होकर नाना साहेब के नाम से पुकारा जाने लगा। उससे युद्ध-विद्याएँ जो सीख रही थीं, वह बालिका कोई और नहीं, वही उत्तरोत्तर वीर नारी के नाम से सुप्रसिद्ध झान्सी रानी लक्ष्मीबाई ही थी।

पुरोहित झान्सी लौटा। उस बालिका के गुण-विशेषों के बारे में उसने महाराज को विशद रूप से बताया। महाराज की आज्ञा के अनुसार प्रधान मंत्री तथा कुछ प्रमुख व्यक्ति वित्तौर आये। उन्होंने प्रस्ताव रखा कि मनुबाई का विवाह झान्सी के राजा गंगाधर से हो।

नाना साहेब व लक्ष्मीबाई का भाग्य एक साथ फूटा। १८५१ में पेशवा मर गये। इसके बाद कंपनी ने उन्हें भरण देने से साफ़ इनकार कर दिया। इसके लिए उन्होंने कारण बताया कि नाना साहेब पेश्वा का निजी पुत्र नहीं है।

उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ कि वे जो सुन रहे हैं, सच है। कंपनी वचन दे चुकी थी कि भूतपूर्व राजाओं को शाश्वत रूप से भरण दिया जायेगा। उनका वचन पाने के बाद ही उन्होंने अपना राज्य कंपनी को सौंपा था। वे जानना चाहते थे कि कंपनी क्यों इतनी जल्दी अपने वचन से मुकर गयी। उन्होंने तत्संबंधी जानकारी पाने के लिए कंपनी को एक पत्र लिखा। उन्होंने उस पत्र में लिखा "आपने भरण देने से इनकार किया तो इसका यह मतलब हुआ कि राज्य फिर से हमारा ही हो गया। जब आपने आप ही के द्वारा गठित नियमों को तोड़ा; उन्हें मान्यता नहीं दी तो पूरा समझौता ही रद्द समझा जाना चाहिये।"

कंपनी इन प्रश्नों का समाधान दे नहीं पायी। उसने इस पत्र पर ध्यान ही नहीं दिया। अपना राज्य जब कंपनी को सौंप दिया गया तब पेशवा की अपनी सेना के होने की गुंजाइश ही नहीं थी। कंपनी को

विश्वास था कि नाना साहेब इस स्थिति में, ब्रिटिश सेना से युद्ध नहीं कर पायेंगे और अपना राज्य हस्तगत कर नहीं पायेंगे। इसी विश्वास के बल पर उन्होंने नाना साहेब की प्रार्थना अनसुनी कर दी। उनके पत्र का उत्तर देने की आवश्यकता महसूस नहीं की।

नाना साहेब को लगा कि यहाँ के अंग्रेज़ अधिकारियों की बुद्धि इतनी वक्र हो सकती है, उनकी नीयत इतनी बुरी व नीचता-पूर्ण हो सकती है, किन्तु लंदन में रहनेवाले अधिकारी इतने धोखेबाज़ व कपटी नहीं होंगे। उनके सम्मुख अवश्य ही कुछ सिद्धांत व आदर्श होंगे। इसी विश्वास पर उन्होंने लंदन में स्थित उच्च अधिकारियों को वास्तविक स्थिति से परिचित कराने के लिए अजिमुल्ला नामक एक राजनीतिज्ञ को अपने प्रतिनिधि के रूप में भेजा। अजिमुल्ला विवेकी और विश्वासपात्र थे। अंग्रेज़ी और फ्रेंच भाषाएँ जानते थे। उनमें वाक्‌चातुर्य भी था। वहाँ पहुँचने के बाद उन्होंने बहुतों से मैत्री की। किन्तु ऐसे अंग्रेज़ों ने उनमें आशाएँ जगायीं, जिनका कंपनी की गति-विधियों से न ही कोई संबंध था, न ही उनके कोई अधिकार थे।

दो सालों के बाद महाराज गंगाधर राव मर गये। मरने के पहले ही उन्होंने अपनी पत्नी को किसी राजकुमार को गोद लेने का अधिकार प्रदान किया। पति के मरने से महारानी लक्ष्मीबाई को बड़ा आघात पहुँचा। उन्हें लगा, मानों उनके सिर पर अकस्मात् बिजली गिरी हो। फिर भी उन्होंने अपने को संभाल लिया और अपने पति की इच्छा के

अनुसार एक बालक को भारतीय संप्रदायों के अनुसार गोद ली।

एक तरफ़ पति की अंत्यक्रियाएँ हो रही थीं तो दूसरी तरफ़ शिशु को गोद लेने का कार्यक्रम चल रहा था। उन्होंने साहसपूर्वक अपने दोनों धर्म निभाये। लक्ष्मीबाई के आस्थान के मंत्रियों, अधिकारियों तथा सामान्य जनता ने भी महसूस किया कि लक्ष्मीबाई एक असाधारण शूर-वीर नारी है, मातृत्व भरी करुणामयी स्त्री है। जिसका जन्म राजवंश में न हुआ हो, जो विधवा हो, कष्टों से जो जूझ रही हो, भला वह किसी की सहायता के बिना राज्य-भार कैसे संभाल सकेगी ? यह कोई साधारण विषय नहीं है। अलावा इसके राजा नित्संतान मर गये। राजवंश के बंधुगण राज्य को हड़पने के कार्य

में क्रियाशील हो गये। वे मौक़े की ताक में गिद्धों की तरह लपकने के लिए तैयार बैठे थे। फिर भी लक्ष्मीबाई ने उनकी हर चाल को विफल कर दिया। उनकी दाल गलने नहीं दी। शीघ्र ही उन्होंने सबको अपने अधीन कर लिया। अपने काबू में ले आ पायीं।

एक दिन प्रधान मंत्री खिन्न वदन लिये आये और लक्ष्मीबाई से कहा "महारानी, एक बुरी ख़बर सुननी पड़ी।"

"महाराज की मृत्यु से बढ़कर बुरी ख़बर और क्या हो सकती है। आप निश्चिंत होकर ख़बर सुनाइये" लक्ष्मीबाई ने कहा।

"देवी, कंपनी का कहना है कि आपने जिस शिशु को गोद लिया, वे राज्य के राजा नहीं हो सकते। यह राज्य उनका नहीं हो सकता" प्रधान मंत्री ने कहा।

"उन्हें यह कहने का क्या अधिकार है? वे कैसे कह सकते हैं कि फ़लाना राज्य फ़लाने को ही मिलना चाहिये, फ़लाने को नहीं। निर्णय लेनेवाले वे कौन होते हैं? यह तो राजा की इच्छा पर निर्भर है। जब राजा नहीं रहे तो रानी निर्णय करेंगी, उसे इसका पूरा हक़ है।" रानी ने गंभीर स्वर में कहा।

मंत्री ने कहा "दत्तक पुत्र को राजा मानने से वे इनकार कर रहे हैं।"

"वे लोग कौन होते हैं इनकार करनेवाले? दत्तक व निजी पुत्र के अधिकार समान होते हैं। हमारे देश में परंपरा से चला आता हुआ संप्रदाय है यह। क्या कोई कह सकता है कि सीता जनक की पुत्री नहीं है? क्या वे इतने मूर्ख हैं, जो इस सत्य को भी स्वीकार करने से अस्वीकार कर रहे हैं?"

"देवी, वे मूर्ख नहीं हैं। दुष्ट हैं दुष्ट। अपने झान्सी के साथ-साथ सारे देश को निगल जाने की उनकी साज़िश है। वे पूरे देश को अपनी ज़मींदारी में बदल देना चाहते हैं।" प्रधान मंत्री ने कहा।

"असंभव, अपनी मातृभूमि झान्सी को लुटेरों के सुपुर्द नहीं करेंगे। वे जो करना चाहते हैं करें, किन्तु हम लोग अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ेंगे-मरेंगे। हमें लड़ना ही होगा।" महारानी की इन बातों को सुनकर स्वयं प्रधानमंत्री और वहाँ उपस्थित सभी आवेश-पूरित हो गये। उनके धैर्य पर मुग्ध होकर सबने सिर झुकाये और प्रणाम किया। **(सशेष)**
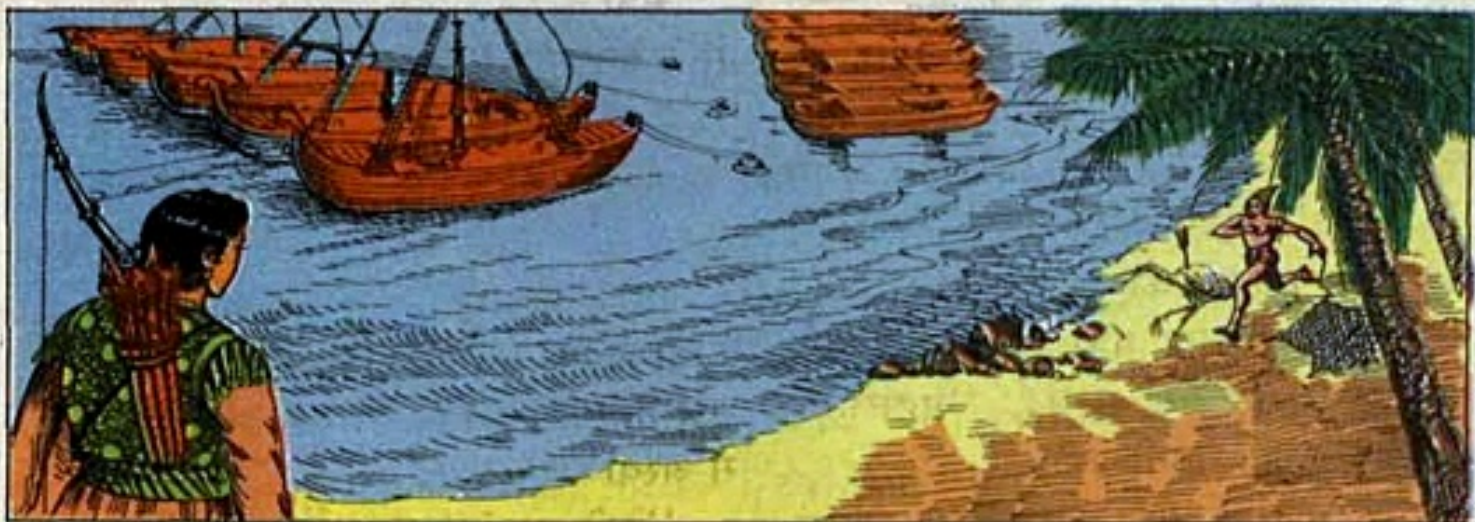
फ़ैसलों में हेर-फेर

पूर्व सिंहल देश में एक व्यापारी रहा करता था। समुद्री व्यापार में उसने लाखों रुपये कमाये। मरने के पहले उसने अपने बेटे जयपाल को अपना व्यापार सौंपा और उससे कहा "बेटे, तुम भी मेरी ही तरह समुद्री व्यापार करो, किन्तु भूलकर भी वंचक महा नगर मत जाना।"

पिता के मर जाने के बाद जयपाल ने समुद्री व्यापार शुरू किया। उसके पास चार नौकाएँ थीं। उसमें कुतूहल जगा कि वंचक महानगर जाऊँ और व्यापार करूँ। वह जानने को उत्सुक था कि वहाँ जाने पर क्या होगा, पिताजी ने वहाँ जाने से क्यों मना किया? वह होशियार था। उसे अपनी होशियारी पर भरपूर विश्वास था। इसलिए उसने सोचा कि कोई धोखा देगा भी तो चाल चलकर उसे चित् कर सकूँगा। वह अपनी चारों नौकाओं को लेकर उस नगर में गया। सूर्योदय का समय था। नौकाएँ तट पर रखवा दीं। धनुष और बाण लेकर तट के किनारे शिकार करने चल पड़ा। उसने एक बगुला देखा। वह समुद्र की मछलियों को पकड़ने की कोशिश में लगा हुआ था। जयपाल ने उसे अपना निशाना बनाया और बाण चलाया। बगुला मर गया और पानी में गिर गया।

समीप ही मछलियों के शिकार में मग्न एक मछुवे ने यह देखा और दौड़ता हुआ वहाँ आया। उसने जयपाल से पूछा, "तुम कौन हो? तुमने मेरे पिता को क्यों मार डाला? मैं तुम्हारे खिलाफ़ राजा से शिकायत करूँगा। फिर देखना, तुम पर क्या बीतेगा।"

जयपाल ने चकित होते हुए पूछा, "क्या वह बगुला तुम्हारा पिता है?"

"हाँ, पूर्व जन्म में वह मेरा पिता था। अब जल पक्षी बनकर मछलियों के शिकार के काम में मेरी मदद कर रहा है।" मछुवे

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

ने कहा।

जयपाल उसकी बातों पर नाराज़ हो गया और उसे फटकारते हुए कहा, "जा, जा, जो भी करना है, कर लो।" मछुवा बिना कुछ बोले चुपचाप वहाँ से चला गया।

फिर जयपाल ने नगर में प्रवेश किया। एक आदमी ने उसके सामने आकर कहा "लंबे अर्से के बाद दिखायी पड़े। बहुत समय पहले अपना दायाँ कान तुम्हारे पिता के पास गिरवी रखा और दस रुपये लिये। अब वे रुपये लौटा दूँगा। मेरा कान मुझे दे दो।"

जयपाल स्तंभित रह गया। उसने उस आदमी को गौर से देखा। उसका बायाँ कान ही था। उसने उस आदमी से कहा "मेरे पिता ने तुम्हारे कान के बारे में मुझसे कुछ नहीं बताया।"

"तुम्हारे पिता ने अगर मेरे कान के बारे में तुमसे नहीं बताया तो मैं क्या करूँ? उसके बेटे होने के नाते यह तुम्हारा फर्ज़ बनता है कि मेरा कान मुझे वापस दे दिया जाए। अगर तुमने मेरा कान मुझे नहीं लौटाया तो राजा से तुम्हारी शिकायत करूँगा" कहता हुआ वह आदमी वहाँ से चला गया।

थोड़ी देर और जाने के बाद एक स्त्री उसके पास आयी और कहा, "देखो बेटे, सोलह सालों के पहले तुम्हारे पिता ने मुझसे शादी की और बिना कुछ कहे चुपचाप चले गये। उन्होने वचन दिया था कि जीवन-यापन खर्च के लिए वे मुझे दस हज़ार रुपये देंगे। मुझे मालूम नहीं कि तुम्हारे पिता ज़िन्दा हैं या नहीं। मुझसे कहे बिना वे परदेश चले गये। मेरे साथ अन्याय किया। अब मेरा कोई सहारा नहीं रहा। मैं दर-दर भटकती फिर रही हूँ। मैं तुम्हारे लिए माँ समान हूँ। अगर तुमने मेरी सहायता नहीं की तो मैं कहीं की न रहूँगी।"

वह अचानक एकदम नाराज़ होती हुई बोली "वह रक़म तुम दोगे या तुम्हारे खिलाफ़ शिकायत करूँ ?"

जयपाल से यह आरोप सहा नहीं गया, उसने उसे फटकारते हुए कहा, "जा, जा। मैं तुम्हें एक दमड़ी भी नहीं दूँगा।" कहकर वह अपनी नौकाओं के पास लौट आया।

वहाँ उसे एक नाई दिखायी पड़ा। उसने पूछा, "बाल कटवायेंगे साहब ?"

जयपाल ने पूछा, "कितना लोगे ?"

नाई ने कहा "मुझे खुश कीजिये साहब"।

जयपाल ने अपने बाल कटवाये और उसे एक रुपया देने ही वाला था, नाई ने लेने से इन्कार कर दिया। पाँच रुपये देने चाहे, फिर भी उसने नहीं लिये। जयपाल ने उसे खुश करने के लिए और धन देना चाहा। किन्तु वह तो लेने से साफ़-साफ़ इनकार कर रहा था। कह भी नहीं रहा था कि उसे कितना चाहिये और क्या चाहिये।

जयपाल ने तंग आकर कहा, "मैं तुम्हें कुछ नहीं दूँगा। जिससे चाहो, जहाँ चाहो, शिकायत कर लो।"

मछुवे ने, एक ही कानवाले ने, स्त्री ने, नाई ने, चारों ने राजा से जयपाल के खिलाफ़ शिकायत की। जयपाल राजसभा में बुलाया गया। सुनवाई शुरू हुई। पहले मछुवे ने राजा से कहा "महाराज, मरे हुए मेरे बाप ने इस जन्म में बगुले का जन्म लिया। लंबे अर्से से मछलियाँ पकड़ने में वह मेरी मदद करता आ रहा है। इस आदमी ने आज सवेरे उस बगुले को मार डाला। इससे मुझे अपार नष्ट पहुँचा। इसने मेरा सहारा मुझसे छीन लिया। इस दुनिया में मेरी मदद करनेवाला कोई नहीं रहा। महाराज, इसकी एक नौका मुझे दिलाइये, जिससे मैं निश्चिंत रह सकूं।"

राजा ने जयपाल से कहा "इस मछुवे को एक नौका हरज़ाने में दो"।

एक ही कानवाले ने शिकायत की "महाराज, इस आदमी के पिता ने मेरा दायाँ कान गिरवी में रखवाकर मुझे दस रुपये दिये। मैं वह रकम लौटाने तैयार हूँ। मैंने इससे अपना कान वापस माँगा तो मुझे धमकी दे रहा है। कहता है कि जिससे चाहो, जहाँ चाहो, शिकायत कर ले।"

राजा ने अपना फ़ैसला सुनाते हुए कहा कि जयपाल अपनी दूसरा नौका हरज़ाने में उसे दे दे।

इसके बाद स्त्री ने जयपाल के ख़िलाफ़

प्रसिद्ध है और पिता ने क्यों इस नगर में जाने से मना किया। गले में जो रत्नहार था, वही अब उसके पास बच गया। वह सोचने लगा "अब मैं क्या करूँ? इस मुसीबत से कैसे निकलूँ?"

तब दस साल की उम्र का राजा का बेटा राजकुमार राजसभा में आया।

जयपाल ने तुरंत अपना रत्नहार निकाला और राजकुमार के गले में डाल दिया।

सभा में उपस्थित सबों ने तालियाँ बजायीं और अपना हर्ष व्यक्त किया।

राजा ने बेटे को अपने पास बुलाया और रत्नहार को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुआ।

जयपाल ने सभिकों से पूछा, "मैंने यह रत्नहार राजकुमार को उपहार में दिया। क्या इस सभा में कोई ऐसा है, जो मेरे इस काम से खुश न हो?"

"नहीं, नहीं, हम सभी खुश हैं" सब चिल्ला पड़े।

जयपाल ने नाई को संबोधित करते हुए पूछा "बोलो, तुम भी खुश हो या नहीं?"

नाई को बताना ही पड़ा कि वह भी खुश है।

तब जयपाल ने राजा से कहा, "महाराज, नाई को खुश किया। इसलिए मैं समझता हूँ कि उसे एक नौका देने की ज़रूरत नहीं है"।

राजा ने कहा "हाँ, उसे नौका देने की ज़रूरत नहीं है।"

फिर जयपाल ने स्त्री को देखते हुए पूछा, "देवी, तुम्हारे हरज़ाने के बारे में एक बात कहना चाहूँगा। मैं वह हरज़ाना तुम्हें अवश्य

शिकायत की। राजा ने इस बार भी आदेश दिया कि तीसरी नौका उस स्त्री के सुपुर्द की जाए।

आख़िर नाई ने अपनी शिकायत पेश करते हुए कहा, "महाप्रभु, इस आदमी ने मुझसे अपने बाल कटवाये। इस आदमी ने वादा भी किया कि तुम्हें खुश करूँगा। इसकी एक नौका मुझे दिलायी जाए तो बड़ी खुशी होगी। उससे कम कुछ दिलवाया तो मुझे खुशी नहीं होगी"।

"नाई का कहा न्याय-संगत लगता है, इसलिए जयपाल अपनी एक नौका इसे दे" राजा ने अपना निर्णय सुनाया।

उन शिकायतों व फ़ैसलों को सुनकर जयपाल निश्चेष्ट रह गया। अब उसे मालूम हो गया कि यह महानगर के नाम से क्यों

दूँगा। किन्तु इसमें एक उलझन है। मेरे देश की रीति के अनुसार पति के मरने के बाद पत्नी को पति के साथ-साथ जल जाना चाहिये। दुर्भाग्यवश मेरे पिता एक साल पहले ही दिवंगत हुए। इसलिए तुम भी चिता में गिरकर अपनी आहुति दे दोगी तो तुम्हारे वारिस को दस हज़ार रुपये दे दूँगा''।

''मैं मरने तैयार नहीं हूँ'' स्त्री ने दृढ़ स्वर में कहा।

जयपाल ने राजा से कहा ''मैं समझता हूँ कि मुझे इस स्त्री को हरज़ाना भरने की ज़रूरत नहीं है''।

राजा ने 'हाँ' कहा।

बाद जयपाल ने एक कानवाले से कहा ''भैया, तुम्हारा कान तुम्हें लौटाने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मेरे पिता जब जीवित थे, तब हजारों लोगों ने अपने कान गिरवी रखे और तुम्हारी ही तरह कर्ज़ लिया। उन हज़ारों कानों में से तुम्हारा कान कौन-सा है, पहचानना मुझसे संभव नहीं। अतः नमूने के तौर पर अपना बायाँ कान काटकर दो तो तुम्हारे दायें कान को पहचानने में आसानी होगी। जब मालूम हो जायेगा कि तुम्हारा कान कौन-सा है, तब दोनों कानों को एक साथ भिजवाऊँगा''।

नाई ने अपना बायाँ कान काटकर देने से साफ़ इनकार कर दिया। राजा ने फ़ैसला सुनाया कि नाई को हरज़ाना देने की कोई ज़रूरत नहीं है।

फिर जयपाल ने राजा से कहा, ''महाराज, मेरे पिता ने मरने के बाद मछली का जन्म लिया और नौकाएँ चलाने में मेरी बड़ी मदद की। तब इस मछुवे का पिता बगुला बनकर आया और मछली को खा लिया, याने मेरे पिता को मार डाला। इसी कारण मैंने उस बगुले को मार डाला। मछली के रूप में जन्मे मेरे पिता न मरते तो मैं इस नगर में प्रवेश ही नहीं करता।''

राजा उसकी बातों पर बहुत ही खुश हुआ और अपना फ़ैसला सुनाते हुए कहा ''मछुवे को भी हरज़ाना भरने की कोई आवश्यकता नहीं है। जयपाल निर्दोषी है''।

फिर एक हफ़्ते तक जयपाल राजा का प्रिय अतिथि बनकर वहीं रहा। राजा ने उसे क़ीमती भेटें भी दीं। फिर अपनी नौकाओं को लेकर स्वदेश की ओर रवाना हुआ।

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता : : पुरस्कार रु. १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, नवंबर, १९९७ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

S.G. SESHAGIRI

MAHANTESH C. MORABAD

* उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। * '२५ सितम्बर,९७ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। * अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा ।
* दोनों परिचियोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास - २६.

जुलाई, १९९७ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **मैं नन्हा राही मतवाला**

दूसरा फोटो : **मैं हूँ बगिया का रखवाला**

प्रेषक : **सुरेश चन्द्र जैन**

१२८/३४६ किदवई नगर, कानपुर, उ.प्र.

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., Chandamama Buildings, Chennai - 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, 188, N.S.K. Salai, Vadapalani, Chennai - 600 026 (India) Editor : NAGI REDDI.

THE MOST ENDEARING GIFT YOU CAN THINK OF
FOR YOUR NEAR AND DEAR WHO IS FAR AWAY
CHANDAMAMA
Give him the magazine in the language of his choice—
Assamese, Bengali, English, Gujarati, Hindi, Kannada,
Malayalam, Marathi, Oriya, Sanskrit, Tamil or Telugu
—and let him enjoy the warmth of home away from home.
Subscription Rates (Yearly)
AUSTRALIA, JAPAN, MALAYSIA & SRI LANKA
By Sea mail Rs. 129.00 By Air mail Rs. 276.00
FRANCE, SINGAPORE, U.K., U.S.A.,
WEST GERMANY & OTHER COUNTRIES
By Sea mail Rs. 135.00 By Air mail Rs. 276.00
Send your remittance by Demand Draft or Money Order favouring
'Chandamama Publications' to:
CIRCULATION MANAGER CHANDAMAMA PUBLICATIONS CHANDAMAMA BUILDINGS
VADAPALANI MADRAS 600 026